गृहिणी बनाम
कामकाजी महिला

THE GLOWING
LAMP

सबमें है प्रभु की
ज्योति का निवास

www.sukhiparivar.com

₹25

समृद्ध सुखी परिवार

अक्टूबर 2012

कायोत्सर्ग में
रहकर देहातीत होना

रावण दहन से
पवित्र होने का भ्रम

हमारा कर्म ही
धर्म बने

मानव मन की
अद्‌भुत शक्तियां

खुशबू और महक
का अहसास

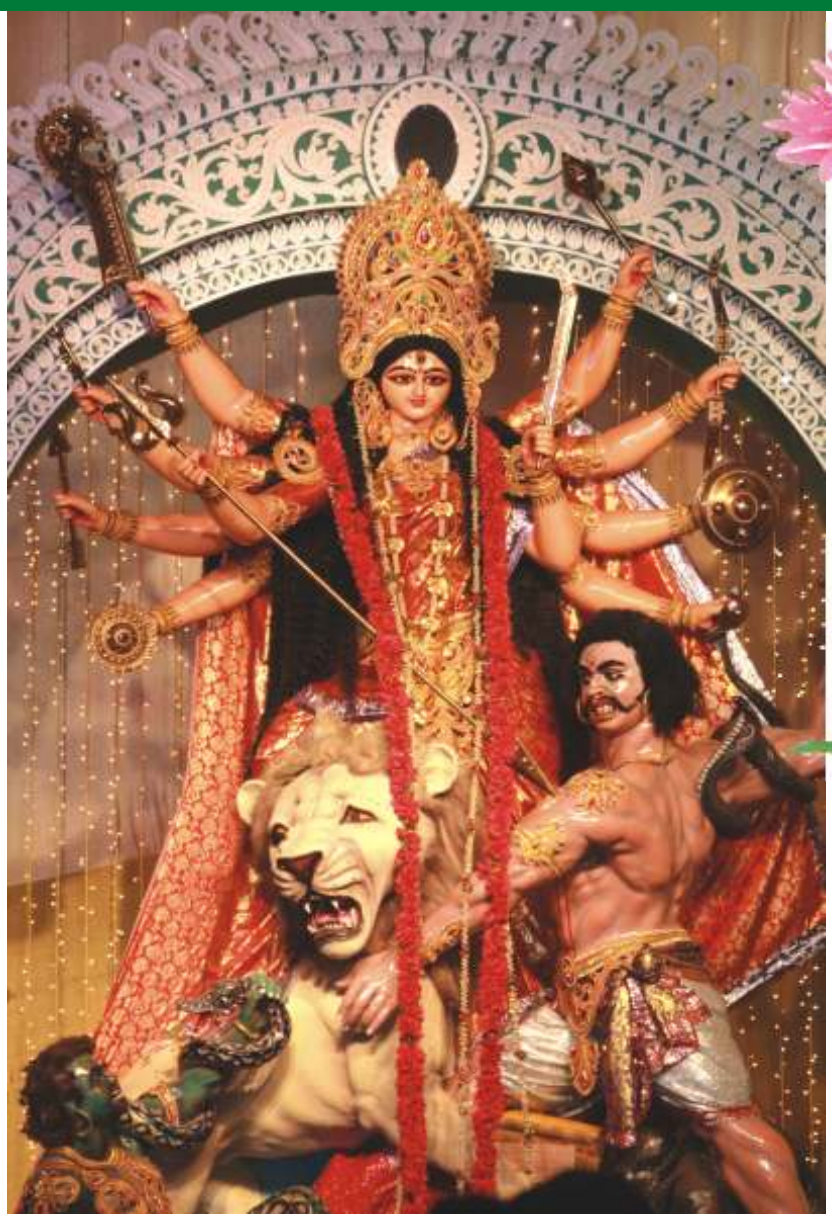

दुर्गा सप्तशती और मनोरथ सिद्धि

नवरात्र खोलते हैं बेहतर जीवन का मार्ग

आज संसार को
करुणा चाहिए

मुहूर्त से किये काम
होते हैं फलदायी

लक्ष्य के प्रति
समर्पण से जुटें

जीवन की
कृतार्थता का रहस्य

जीवन के लिए
हंसना जरूरी

घर-परिवार | ज्ञान-विज्ञान | जीवन-दर्शन | अध्यात्म | योग | दिशाबोध | पर्यटन

VASU CREATION

B-4/1626, RAI BAHADUR ROAD, LUDHIANA - 141 008

Phone No. 0161-2740154, 98142-62392

Mfrs. of PREMIUM RANGE OF GIRLS, LADIES & GENTS NIGHT WEARS

–: SPECIALISTS IN :–

LONG KURTA ❖ 3PC SET ❖ MATERNITY WEAR ❖ JIM WEAR ❖ CAPRI SET & SLEX SUIT

समृद्ध सुखी परिवार

सुखी और समृद्ध परिवार का मुखपत्र

वर्ष : 3 अंक : 9

अक्टूबर 2012, मूल्य : 25 रु.

मार्गदर्शक
गणि राजेन्द्र विजय

परामर्शक
अशोक एस. कोठारी
अध्यक्ष: सुखी परिवार फाउंडेशन

संपादक
ललित गर्ग
(9811051133)

कला एवं साज-सज्जा
महेन्द्र बोरा
(9910406059)

सलाहकार मंडल
दीपक रथ, दीपक जैन-भायंदर,
दिनेश बी. मेहता, निकेश एम. जैन,
कुशलराज बी. जैन, नवीन एस. जैन,
श्रेणिक एम. जैन-मुंबई,
चंदू वी. सोलंकी-बैंगलौर,
मुकेश अग्रवाल-दिल्ली,
विपिन जैन-लुधियाना

वितरण व्यवस्थापक
बरुण कुमार सिंह
+91-9968126797, 011-29847741

: शुल्क :
वार्षिक: 300 रु.
दस वर्षीय: 2100 रु.
पंद्रह वर्षीय: 3100 रु.

कार्यालय
ई-253, सरस्वती कुंज अपार्टमेंट
25 आई.पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज
दिल्ली-110092
E-mail: lalitgarg11@gmail.com

कायोत्सर्ग में रहकर देहातीत होना

'कायोत्सर्ग' जैन साधना पद्धति का विशिष्ट शब्द है जिसका अर्थ है काया का उत्सर्ग या त्याग। यहां शरीर-त्याग का अर्थ मृत्यु नहीं वरन् देहासक्ति या शरीर के प्रति ममता का त्याग है।

-गणि राजेन्द्र विजय

6	धर्मरथ के पहिए	वल्लभ उवाच
6	निर्भयता ही सर्वश्रेष्ठ गुण	आचार्य विनोबा भावे
8	हमारा कर्म ही धर्म बने	रामस्वरूप रावतसरे
9	नवरात्र खोलते हैं बेहतर जीवन का रास्ता	सीताराम गुप्ता
10	महाफलदायी संध्योपासना	दिनेश कुमार
11	मनोरथ सिद्धि के लिए दुर्गा सप्तशती पाठ	आचार्य कालीचरण मिश्र
12	वारों का विज्ञान	राकेश मधुसूदन
13	पति-पत्नी का मिलन है एक अनवरत यात्रा	पायलट बाबा
13	उचित दक्षिणा	डॉ. विजयप्रकाश त्रिपाठी
14	आज संसार को करुणा चाहिए	डॉ. नरेन्द्र शर्मा 'कुसुम'
15	जीवन के लिए हंसना जरूरी है	साध्वी राजीमती
16	अहंकार है दुख का कारण	आचार्य सुदर्शन
16	जहां पत्थर पानी में तैरते हैं	देवकिशन राजपुरोहित
17	मानव मन की अद्भुत शक्तियां	डॉ. श्याम मनोहर व्यास
18	जीवन की कृतार्थता का रहस्य	रूपनारायण काबरा
18	सबसे बड़ा रुपैया	राजेश मिश्र
19	भविष्य चिंतन का दर्शन	ऋषि कुमार शर्मा
20	बुढ़ापा अभिशाप क्यों?	डॉ. प्रीत अरोड़ा
21	साधारण से संत तक का सफर	संगीता शुक्ला
22	महाभारत में स्त्री सबला!	डॉ. सुधा उपाध्याय
23	रामायण में अपराध एवं दण्ड की व्यवस्था	डॉ. जमनालाल बायती
23	खुशबू और महक का अहसास	पल्लवी सक्सेना
26	रावण दहन से पवित्र होने का भ्रम	गोवर्धनलाल पुरोहित
26	सबसे असरदार दवा है पैदल चलना	हिप्पोक्रेट्स
27	सबमें है प्रभु की ज्योति का निवास	संत राजिंदर सिंहजी
28	गृहिणी बनाम कामकाजी महिला	साध्वी कल्पसाश्री
28	मुहूर्त से किये काम होते हैं फलदायी	नरेन्द्र देवांगन
29	वांगड़ के राजा-रानी कल्पवृक्ष	द्वारकेश भारद्वाज
30	आध्यात्मिक साधना से जोड़ें संगीत	आचार्य दिव्यचेतनानंद
31	अमृत फल आंवला	डॉ. हनुमान प्रसाद उत्तम
32	आधुनिकता और टूटते पारिवारिक संबंध	डॉ. राम भरोसे
33	सत्यं, शिवं और सुंदरम् की प्रतीक है मां	मंजुला जैन
34	हाथ-हथेली के रंग-ढंग	डॉ. प्रेम गुप्ता
35	विकलांगों के नाम समर्पित व्यक्तित्व	ललित गर्ग
36	वास्तु ऊर्जा से भरपूर हो शयनकक्ष	डॉ. प्रेम शर्मा
36	अमृतवेला की महिमा	जगजीत सिंह
37	सुख भी देते हैं शनिदेव	विवेक शर्मा
38	जीवन को सुंदर बनाते हैं संस्कार	आचार्यश्री महाश्रमण
38	चेहरे में छिपा भविष्य	मुरली कांठेड़
39	कृष्णमंत्र और उनके प्रयोग	ब्रजेन्द्र नंदन दास
40	The Glowing Lamp	Sri Sri Ravishankar
41	Extrasensory Consciousness	Acharya Mahaprajna
41	Tomorrow is Uncertain	Amrit Sadhana
42	जब हिरणाक्ष ने इन्द्र को स्तंभित किया	किरण सिन्हा
45	कसौली: सेहतमंद आबोहवा देता पर्यटन स्थल	पुखराज सेठिया
46	लक्ष्य के प्रति समर्पण से जुटें	अशोक एस. कोठारी

Published, Printed, Edited and owned by Lalit Garg from E-253, Saraswati Kunj Appartment, 25 I.P. Extn. Patparganj, Delhi-110092. Printed at : Bookman Printers, A-121, Vikas Marg, Shakarpur, Delhi-110092.
Editor : Lalit Garg

समृद्ध सुखी परिवार मासिक पत्रिका नियमित प्राप्त हो रही है। यह पत्रिका पढ़ने के बाद मैं अपने पास कम रखता हूं और दूसरों को पढ़ने हेतु दे देता हूं ताकि इस उपयोगी पत्रिका से और जन भी परिचित होकर लाभान्वित हों। यह पत्रिका परिवार को समृद्ध एवं सुखी बनाने में बहुत सहयोग कर रही है जिसमें आपके संपादकीय तो इतने ठोस होते हैं कि उनका कोई काट नहीं हो सकता। जिस तरह यह नारा- 'दुनिया के मजदूरों एक हो' के स्थान पर 'केवल आकाओं (नेताओं) को सन्मति दे भगवान' ही उचित है। आपने चरित्र क्रांति का दौर चले सुझाया बहुत उत्तम है। वर्तमान में जो हो रहा है वह तो सब जानते ही हैं परन्तु उसमें सुधार कैसे हो। इसका ज्ञान आपकी इस पत्रिका ने सुझाया है। जुलाई अंक में विद्वानों के विभिन्न लेख- आत्मशुद्धि है महातीर्थ, धन कुछ है सब कुछ नहीं, पिता-पुत्र कैसे बनाए मधुर संबंध आदि ज्ञानवर्द्धक हैं।

–भंवरलाल माछर
6, रामबाड़ी जालोरी गेट,
जोधपुर-342003 (राजस्थान)

पत्रिका का जुलाई-2012 का अंक मिला। इस अंक में पृष्ठ-39 पर प्रकाशित शशि भूषण शलभ के आलेख 'शंखनाद से नष्ट होते हैं रोगाणु' की निम्न पंक्तियों के संदर्भ में ध्यान आकृष्ट करना चाहूंगा। शंख दो प्रकार के होते हैं- एक दक्षिणावर्ती और दूसरा वामावर्ती। दक्षिणावर्ती शंख का पेट दक्षिण की ओर खुला होता है। इस शंख को बजाया नहीं जाता। क्योंकि इस शंख का मुंह बंद होता है। धार्मिक दृष्टि से भी दक्षिणावर्ती शंख को अशुभ माना जाता है। दक्षिणावर्ती शंख घर में रखने से लक्ष्मी का वास नहीं होता है।''

लेखक महोदय के इन विचारों से मैं तो भ्रमित हूं ही, जिन लोगों को यह बात बतायी और पत्रिका में पढ़वाया, वे भी संदेह में हैं। क्योंकि दक्षिणावर्ती और वामावर्ती दोनों प्रकार के शंखों के मुंह अपनी पूर्व (मौलिक) अवस्था में बंद ही होते हैं। उन्हें साफ-सुथरा कर सुधारा, तराशा जाता है और उनके मुंह खोले जाते हैं ताकि उन्हें बजाया जा सके। दक्षिणावर्ती शंख, वामावर्ती शंखों की तुलना में सुलभ नहीं होते और महंगे भी होते हैं। जनश्रुति के अनुसार (इधर) दक्षिणावर्ती शंखों को अशुभ और हानिकर नहीं माना जाता। उन्हें प्रतिदिन (वामावर्ती शंखों की तरह) बजाया भी नहीं जाता। किसी विशिष्ट मांगलिक पर्व जैसे दीपावली के दिन ही दक्षिणावर्ती शंखनाद किया जाता है। यह भी मान्यता है कि दक्षिणावर्ती शंख का प्रतिदिन पूजन और दर्शन अत्यंत शुभ और कल्याणकारी है। ये दो प्रकार के होते हैं- नर (विष्णु) और मादा (लक्ष्मी)।

–शिव शरण दुबे
दमदहा पुल के पास
कटनी मार्ग, बरही-483770 (म.प्र.)

समृद्ध सुखी परिवार पत्रिका के सभी अंक नियमित रूप से मिल रहे हैं। पत्रिका, उत्तरोत्तर आपके कुशल संपादन में दिनोंदिन लोकप्रिय बनती जा रही है। स्वस्थ, मूल्योन्मुखी पत्रकारिता के रूप में इसकी अपनी एक अलग पहचान बन चुकी है। प्रकाशित सामग्री का कुशल चयन, विषय-वस्तु का वैविध्य, लौकिक-अलौकिक का सुंदर समीकरण, सनातन-अधुनातन का विरल समन्वय जैसी विशेषताओं के कारण यह पत्रिका हर दृष्टि से एक मुकम्मल पत्रिका है जो संस्कार निर्माण की दिशा में अहोरात्र अग्रसर है। आपका संपादकीय विचार वैभव संपन्न होने के साथ-साथ आपके अन्तर्बोध का भी परिचायक है। आपके द्वारा लिखित समीक्षाओं में आपकी अंतर्दृष्टि, भाषा सामर्थ्य तथा सूझ-बूझ पूर्णरूपेण परिलक्षित होती है।

–डॉ. नरेन्द्र शर्मा 'कुसुम'
7 च-2, जवाहर नगर
जयपुर-302004 (राजस्थान)

समृद्ध सुखी परिवार मासिक पत्रिका का अगस्त-2012 अंक मिला। आप देश-धर्म की एकता सद्भावना में 'बरकत और अजमत का महीना' तथा 'शरीर को शुद्ध करता है उपवास' दोनों आलेखों का प्रकाशन इसी ओर इंगित करता है। जिस प्रकार पत्रिका का कलेवर विस्तृत, मोहक एवं अच्छा है, उसी प्रकार लेख एवं अन्य रचनाएं भी रुचिकर एवं प्रेरणास्पद हैं।

–बद्री नारायण तिवारी
मानस संगम, 38/24
प्रयाग नारायण शिवाला
कानपुर-208001 (उत्तरप्रदेश)

समृद्ध सुखी परिवार मासिक पत्रिका का अगस्त-2012 अंक भी स्तरीय बन पड़ा है। सभी लेख सकारात्मक सोच और अर्थपूर्ण

जीवनशैली का मार्ग सुझाते हैं। हम सभी के लिए ऐसे सार्थक विचारों को जानना और समझना आज के समाज की जरूरत है ताकि परिवार और समाज में सुख समृद्धि छाई रहे। स्तरीय पत्रिका के लिए बधाई।

–डॉ. मोनिका शर्मा
75/56, शिप्रापथ, मानसरोवर
जयपुर-302020 (राजस्थान)

वास्तव में 'समृद्ध सुखी परिवार' जैसी स्तरीय पत्रिका निकालना एक अद्भुत कार्य है। संयुक्त राज्य अमेरिका में तो मेरे लिए इसका काफी महत्व है। 'समृद्ध सुखी परिवार' मासिक पत्रिका में लेख, मुद्रण, रंगीन पृष्ठों की साज-सज्जा का चयन प्रभावशाली है। आपकी टीम को मेरी ओर से हार्दिक बधाई।

–डॉ. नीलम जैन
कैलिफोर्निया, यू.एस.ए.

अनेकविध सामग्री से परिपूर्ण अनुपम लालित्य की एकमात्र पत्रिका मुझे 'समृद्ध सुखी परिवार' लगी। अगस्त-2012 का अंक मुझे ललित नारायण उपाध्याय के सौजन्य से मिला। मैं तथा पूरे परिवार के सदस्यों ने इसे आज ही पढ़ा। इतनी पठनीय कविताएं एवं लेख मन को स्पर्श कर गये। मुख्य पृष्ठ तथा आकर्षक कलेवर एवं साज-सज्जा के रूप में प्रकाशन पर आप बधाई के पात्र हैं। प्रकाशन हेतु सामग्री का चयन करने वाले आपके सभी साथी भी बधाई तथा प्रशंसा के पात्र हैं।

ऐसी पत्रिकाएं पढ़ने को मिलें तो पढ़ने का संस्कार, भाषा सुधार का संस्कार तथा अनेक विषयों को समझने का और फिर उसका पालन करने का संस्कार मिलेगा।

–महेश सक्सेना
ईडल्यूएस-9, कस्तूरबा स्कूल
के पीछे, नार्थ टी.टी. नगर,
भोपाल-462003

हमें गांधी बनने का संकल्प लेना होगा

अभी देश एक अनिश्चितता की स्थिति में है। लगातार महंगाई बढ़ रही है, सरकार कभी कोयले की कालिमा से कलंकित होती है तो कभी बार-बार की डीजल-पेट्रोल-रसोई गैस के अनुचित दाम बढ़ाने के सवालों से घिरती है। लोकपाल विधेयक, भ्रष्टाचार और कालेधन की वापसी के मुद्दे पर तो उसने जन-आवाज को कुचलने के सफल प्रयास किये ही है। कॉरपोरेट लूट और भ्रष्टाचार में गले तक डूबी सरकार और सत्ताधारी हर विरोध के स्वर का गला घोंटने पर आमाादा हैं। कार्टूनिस्ट असीम त्रिवेदी को देशद्रोह के जुर्म में गिरफ्तार करवाना इसका साक्ष्य है। समस्याएं तो अनेक हैं, समाधान की रोशनी कहीं नजर नहीं आती। बात कहां से शुरू की जाए। हम खो भी बहुत चुके हैं, जिनकी भरपाई मुश्किल है। विजयादशमी एवं गांधी जयन्ती मनाते हुए एक प्रश्न बार-बार कौंधता है कि घोटालों, नाकामी एवं स्वार्थों से घिरी यूपीए सरकार आखिर कब तक आम भारतीय की असीम सहनशीलता एवं धैर्य की परीक्षा लेती रहेगी? हॉब्स कहते हैं कि राज्य और समाज एक-दूसरे के पूरक हैं और एक-दूसरे के साथ मिलकर रहते हैं, लेकिन हमारे देश की वर्तमान राजनीति व्यवस्था ऐसी बन गयी है जिसमें जनता और राजनीति (सरकार) की एकता केवल चुनाव के समय देखने को मिलती है।

आज सारा माहौल राजनीति अपराध, अवसरवादिता और आर्थिक भ्रष्टाचार में रंग गया है। कल का छुटभैया और अपराधी आज नेता बन गया, सांसद और मंत्री बन गया। वह पूजा जाता है आज गांधी और महावीर से भी बढ़कर। वर्तमान राजनीति एवं राजनेताओं ने स्वयं को इतना महिमामंडित कर लिया है कि महापुरुषों की स्मृति सभाएं सूनी रहती हैं पर नेता को सुनने हजारों-लाखों की भीड़ तैयार। ये जेल की सलाखों के पीछे पहुंचकर भी अपने को आदर्शवाद का शीर्ष जताना चाहते हैं। कैसी विडम्बनापूर्ण स्थितियों एवं विवशताओं से रू-ब-रू है वर्तमान दौर। जहां न कोई आदर्श है, न कोई उद्देश्य। न सच्चाई है, न प्रामाणिकता। सिर्फ अवसरवादिता का लाभ उठाया जाता है। जबकि सुखी परिवार अभियान के प्रणेता गणि राजेन्द्र विजयजी के अनुसार, एक अच्छा नायक हमेशा अपने से ज्यादा दूसरों की फिक्र करता है।

रावण का बुत हर साल जलता है मगर बुराइयां जीने के लिए फिर नये बहाने ढूंढ लेती हैं। श्रीकृष्ण की गीता जीवन के हर मोड़ पर निष्काम कर्म का संदेश देती है मगर संग्रह और भोग का अनियंत्रण मन को अपाहिज बना देता है। महावीर के जीए गए सत्यों की हर बार समीक्षा होती है मगर सिद्धांतों की बात शास्त्रों, संवादों और संभाषणों तक सिमट कर रह जाती है। गांधी का जीवन-दर्शन सिर्फ अतीत की याद बनकर रह गया है। गांधी को तो बस तस्वीर में मढ दिया गया है, उसके नाम पर राजनीतिक रोटियां सेंकने का कुचक्र लगातार जारी है।

आज कहां है राम का वह संकल्प जो बुराइयों के विरुद्ध लड़ने का साहस करे? कहां है महावीर की अनासक्ति जो अनावश्यक आकांक्षाओं को सीमा दे सके? कहां है गांधी की वह सोच कि देश का बदन नंगा है तब मैं कपड़े कैसे पहनूं?

राज्य मनुष्य के हित में एक जरूरी और स्वाभाविक प्रक्रिया है। मनुष्य के लिए राज्य या सत्ता का होना बहुत जरूरी है। अरस्तू कहते हैं कि राज्य आदमी की स्वाभाविक जरूरत है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि जब तक आदमी राज्य में नहीं रहता, वह जंगल में विचरता पशु है। आदर्श राज्य के निर्माण में बेहतर राज्य की कामना और उत्तम मानवीय गुणों की जरूरत होती है। राज्य की कामना किए बगैर आप मनुष्य और पशु जीवन में अंतर नहीं कर सकते, इसलिए अरस्तू मनुष्य के लिए राज्य या सत्ता का होना बहुत जरूरी मानते हैं और जरूरी है भी। लेकिन हमारे यहां जिस तरह की राज्य-व्यवस्था बनती जा रही है, उससे तो यही प्रतीत होता है कि हम जंगल-राज्य की ओर बढ़ रहे हैं। स्वयं अरस्तू आज यह व्यवस्था देखते तो यही कहते कि इससे तो जंगल-राज्य बेहतर है। क्योंकि आज की सरकारी नीतियों एवं व्यवस्थाओं से जो हालात बने हैं, उससे आम आदमी का जीना दुर्भर हो गया है। आम आदमी तो वास्तव में घुटनों से पेट ढ़कने को विवश है। लोकतंत्र में गरीबों के हाल का भले ही किसी को चिंता हो या न हो, करोड़ों के घोटालों से राजनीतिज्ञों का खजाना बढ़ रहा है। सत्तारूढ़ कांग्रेस पार्टी की अपनी तिजोरी तो अन्य दलों से काफी बड़ी है। हाल ही में प्रकाशित हुए तथ्यों में कांग्रेस को सबसे अधिक चंदा मिला है। कांग्रेस को सबसे अधिक चंदा क्यों मिला? इसका उत्तर भी स्पष्ट है। यह पैसा कार्पोरेट घरानों, उद्योगपतियों और पूंजीपतियों ने उसे दिया। हरकत में बरकत का मुहावरा तो ठीक है लेकिन यह बरकत राजनीतिज्ञों की हरकतों से हुई है। गरीब, किसान की आत्महत्याओं पर कांग्रेस पार्टी एवं यूपीए सरकार चुप्पी साध लेती हैं लेकिन औद्योगिक घरानों के लिए लाबिंग में वह सबसे आगे रहती हैं। लगता है सरकार विकासहीन ही नहीं संकल्पहीन है, मुश्किल दौर में संकल्पहीन सरकारें बहुत तकलीफ देती हैं और वह तकलीफ दे रही है।

हमारे वर्तमान दौर की समस्याओं की जड़ भ्रष्टाचार है। बोलने वाले भ्रष्टाचार से जीने वाला भ्रष्टाचार ज्यादा खतरनाक होता है। भ्रष्ट आश्वासन, भ्रष्ट योजना, भ्रष्ट आदर्श, भ्रष्ट परिभाषा, भ्रष्ट हिसाब, भ्रष्ट रिश्ते। चिन्तन में भी भ्रष्ट, अभिव्यक्ति में भी भ्रष्ट। यहां तक कि भ्रष्टाचार ने पूर्वाग्रह का रूप भी ले लिया है। एक भ्रष्टाचार के लिए सौ भ्रष्टाचार और उसे सही ठहराने के लिए अनेक तर्क। लगता है सत्ताशीर्ष से जुड़े लोग भ्रष्ट बोलते ही नहीं, भ्रष्टाचार को ओढ़ भी लेते हैं। आज का जीवन माल गोदाम में लटकती उन बाल्टियों की तरह है जिन पर लिखा हुआ तो (आग) है पर उनमें भरा हुआ है पानी और मिट्टी। आर्थिक भ्रष्टाचार से ज्यादा घातक है नीतिगत भ्रष्टाचार। नीतिगत भ्रष्टाचार का धक्का कोई समाज या राष्ट्र सहन नहीं कर सकता।

हमारे देश का कलेवर ही कुछ ऐसा है कि ईमानदारी और भ्रष्टाचार की शक्तियों के बीच परस्पर संघर्ष चलता रहता है। कभी ईमानदारी तो और कभी भ्रष्टाचार ताकतवर होता रहा है। लेकिन इन घनघोर अंधेरों के बीच आशा की एक किरण यह है कि भ्रष्टाचार एवं झूठ के इतिहास को गर्व से नहीं, शर्म से पढ़ा जाता है। आज हमें झण्डे, मंच और नारे नहीं बल्कि नैतिकता एवं ईमानदारी की पुनः प्रतिष्ठा चाहिए। हर लड़ाई झूठ से प्रारम्भ होती है पर उसमें जीत सदैव सत्य से ही होती है। गांधी जयन्ती मनाते हुए हमें गांधी को तस्वीर में नहीं,जीवन में अवतरित करना होगा, हमें स्वयं को गांधी बनने का संकल्प लेना होगा। गांधी बनने का अर्थ है गांधी का पुनर्जन्म, जो हमारे देश की अनिवार्य अपेक्षा है। हम कदम-दर-कदम उन पद्चिन्हों पर चले जो हमारी आस्था को यह विश्वास दें कि हमारे भीतर भी गांधी-सी सत्य एवं नैतिकता की अनन्त शक्ति है।

धर्मरथ के पहिए

इतना जरूर है कि शुभ कर्मों से मनुष्य पुण्य-उपार्जन कर सकता है और उसके निमित्त से धर्माचरण के द्वार तक अनायास ही पहुंच सकता है। किन्तु पुण्यकर्मों के संचयवश आखिर देवलोक आदि गतियों में परिभ्रमण तो करना ही पड़ता है।

पुण्य और धर्म में अन्तर यह है कि पुण्य का सीधा संबंध शरीर से है शरीर संबंधित वस्तुओं से है, जबकि धर्म का सीधा संबंध आत्मा से है। पुण्य में कुछ स्वार्थ का अंश जरूर रह जाता है, जबकि धर्म में बिल्कुल निःस्वार्थता होती है, बदले की भावना कतई नहीं होती। किन्तु नीतिमत्ता या नैतिकता की दोनों में अनिवार्यता है। शुद्ध नीति की नींव के बिना न तो पुण्य ही टिक सकता है, न धर्म ही। दोनों ही धर्मलक्षी नीति के बिना धराशायी हो जायेंगे।

उक्त शुद्ध धर्म के चार चरण महापुरुषों ने बताए हैं, जिनके आचरण से मनुष्य अशुभ कर्मों से छूट जाता है, कर्मों को रोक सकता है, घटा सकता है और सर्वथा खत्म कर सकता है। धर्म के ये चार अंग हैं, जिनके सहारे धर्म त्वरित गति कर सकता है। ये चार चरण इस प्रकार हैं– दान, शील, तप और भाव।

दान मानव जीवन में स्वार्थ, लोभ, तृष्णा और लालसा का त्याग कराता है, मानव हृदय को करुणा, परोपकार और परसुखवृद्धि में सहायता से प्रेरित करता है जैसे खेती करने के पहिले किसान धरती में उगे कांटों, कंटीले पौधों, फालतू घास तथा कंकड़-पत्थरों को उखाड़ कर, साफ करके धरती को नरम और समतल बना लेता है, तभी उसके बोये हुए बीज अनाज की सुन्दर फसल देते हैं। इसी प्रकार मानव की हृदयभूमि पर उगे हुए तृष्णा रूपी घास, लालसा, स्वार्थ और अहंता रूपी कांटे व कंकर-पत्थरों को उखाड़ कर हृदय को नम्र और समरस बनाने के लिए दान की भावना उत्तम साधन है। उसके बाद बोए हुए दान-बीज से धर्म की फसल तैयार होती है। इसी प्रकार धर्म की मर्यादाओं पर स्थिर रहने के लिए शील पालन की आवश्यकता है। अपनी तीव्र इच्छाओं को रोककर दूसरे के लिए कष्टसहन करने एवं संयम की सड़क पर जीवनरथ चलाने के लिए तपस्या की आवश्यकता है और जीवन को बुरे विचारों से रोक कर शुभ, उदात्त और व्यापक विचारों और उच्च भावनाओं से ओतप्रोत करने के लिए भाव की भी जरूरत है।

मतलब यह है कि धर्मरथ को चलाने के लिए दान, शील, तप और भाव इन चारों की अनिवार्य जरूरत है। इनमें से एक भी न हो तो काम नहीं चल सकता। यदि दान न हो तो शेष तीन अंगों के द्वारा उदारता और नम्रता सक्रिय रूप नहीं ले सकेगी। यदि शील न हो तो समाज में सदाचार की मर्यादाएं सुस्थिर नहीं हो सकेंगी। यदि तप न हो तो जीवन के पट पर चढ़ा हुआ कर्ममैल दूर नहीं हो सकेगा, समाज व व्यक्ति के जीवन में प्रविष्ट अशुद्धि दूर नहीं हो सकेगी और न मनुष्य की इच्छाओं पर संयम हो सकेगा। और भाव तो जीवन का सर्वस्व है, उसके बिना कोई भी प्रवृत्ति उदात्त, व्यापक व शुद्ध धर्म से ओतप्रोत नहीं हो सकेगी।

बालकों, युवकों, प्रौढ़ों, वृद्धों, बहनों और माताओं सबके लिए इन चारों का आचरण सुलभ है, सुगम है और सहज है। इनसे स्वपर विकास हो सकता है और जीवन मंगलमय हो सकता है।

आशा है, आप इस चार अंगों वाले शुद्ध धर्म के प्रकाश को जीवन में अपनायेंगे। ●

निर्भयता ही सर्वश्रेष्ठ गुण

■ **आचार्य विनोबा भावे**

सत्य से चिपके रहना ही सत्याग्रह है। अपने सारे जीवन का गठन सत्याग्रह निष्ठा पर करना, चाहे जितनी मुसीबतें आएं, तो भी जिसे हम सत्य समझते हैं, उस पर टिके रहना सत्याग्रह है। उसके लिए कष्ट सहन करने पड़ें तो भी हर्ज नहीं। इतना ही नहीं, उसके लिए हम कष्ट सहन करते हैं, इसका भान भी नहीं होना चाहिए। सत्य का अमल करने वाले को उसके लिए किए जाने वाले प्रयत्न में आनंद आता है।

इस तरह आपत्ति में सत्य पर टिके रहने की शक्ति जनता में होनी चाहिए। यही एक शक्ति है, जिससे दुनिया हिंसा से बच सकती है। मैं मानता हूं कि दुनिया के लिए सत्याग्रह से मुक्तिदायक कोई भी दूसरा शस्त्र नहीं। जिस किसी समाज में जो कुछ समस्याएं हों, उनके समाधान के लिए इस शक्ति का उपयोग हो सकता है। सर्वश्रेष्ठ गुण कौन-सा है, यह कहना मुश्किल है। लेकिन गीता में उसे 'अभयम्' कहा गया है।

इसलिए निर्भयता के पाए पर ही सारी तालीम की रचना होनी चाहिए। समाज-रचना और राज्य-प्राप्ति की रचना भी उसी आधार पर होनी चाहिए। निर्भय बने बिना सत्यनिष्ठा नहीं बढ़ेगी और न सत्य पर अडिग रहने की शक्ति ही आएगी। निर्भयता का अर्थ है न तो किसी से डरना और न किसी को डराना। दोनों मिलकर निर्भयता बनती है। अपने आपको देह से भिन्न देखने में ही निर्भयता है, जो अपने को देह से भिन्न देखता है, वह दूसरों को भी देह से भिन्न देख सकता है। इसलिए वह किसी से दबता नहीं और न किसी को दबाता ही है। किसी से डरता नहीं और न किसी को डराता है। शरीर से अपने आपको अलग पहचानना ही आत्मज्ञान है और यही है सत्याग्रह की शक्ति का अनुष्ठान।

सत्याग्रह में दोनों पक्षों की जीत ही होती है। लड़ाई में तो विचार कुंठित होता है जबकि सत्याग्रह में धीरजपूर्वक अपना विचार समझाते रहना है। एक रीति से न समझें तो जिस रीति से समझ सकें उस रीति से कुशलतापूर्वक विचार समझना, यही सत्याग्रह का सर्वोत्तम, शुभ स्वरूप है। यह जो ज्ञान-शक्ति पर विश्राम है उसी का नाम है सत्याग्रह। सत्याग्रह कोई अड़ंगा या दबाव डालने की बात नहीं।

उपवास सत्याग्रही का उत्तम शस्त्र है लेकिन यह शस्त्र ऐसा है कि ठीक उपयोग होने पर ही वह फलदायी होता है। जब सरकार उल्टे मार्ग पर चल पड़ी हो, जनता कुछ सुनती ही न हो, बहक गई हो, ऐसे समय अत्यंत व्याकुल होकर महापुरुष परमेश्वर से प्रार्थना करने के लिए उपवास कर सकता है। ऐसे उपवास धमकी स्वरूप नहीं बल्कि प्रेम पराकाष्ठा स्वरूप होंगे।

ताली पीटने से भक्ति पैदा नहीं होती। भक्तिवश ताली बजती है तब भक्ति का स्वरूप प्रकट होता है, लेकिन हम ताली को भक्ति की युक्ति मान बैठें तो वह ठीक नहीं होगा। इस प्रकार जब उपवास प्रेम, सत्य, करुणा आदि के स्वाभाविक परिणामस्वरूप आता है तो उसका असर भी प्रेम, सत्य, करुणा आदि के असर से भिन्न नहीं होता।

स्वराज्य मिलने के बाद लोकशाही में सत्याग्रह हो तो वह बहुत अधिक स्पष्ट, शक्तिशाली और अधिक रचनात्मक अर्थ रखने वाला होना चाहिए। ●

कायोत्सर्ग में रहकर देहातीत होना

■ गणि राजेन्द्र विजय

कायोत्सर्ग में जब शरीर शिथिल होता है तब जाग्रत मस्तिष्क भी शिथिल हो जाता है परन्तु अवचेतन मन सक्रिय रहता है और उसकी गतिविधियों को साक्षीभाव से देखने से आवेशों व संस्कारों को भी देखने का मौका मिलता है।

हमारे दु:खों का मूल कारण है अपने शरीर के प्रति ममता और इस शरीर के लिए सुख प्राप्ति के साधनों के प्रति ममता। साधनों की प्राप्ति एवं संरक्षण के लिए हम अथक उपाय और परिश्रम करते हैं। सुख के साधनों को एकत्र करने में ही सारा जीवन बिता देते हैं। शरीर-सुख के साधनों के संग्रह के प्रति आसक्ति इतनी बढ़ जाती है कि कभी-कभी ये सुख के साधन शरीर से भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाते हैं और साधन ही लक्ष्य बन जाते हैं।

साधनों के संग्रह एवं संरक्षण के लिए उचित-अनुचित की सीमा भी लांघ जाते हैं और अपने स्वार्थ के लिए दूसरे प्राणियों के सुख का विनाश ही नहीं करते बल्कि उनके जीवन का हनन भी करते हैं। कामनापूर्ति का कुचक्र कामना को मरने नहीं देता और कामना हमको मरने नहीं देती। एक कामना के पूरे होने पर तत्काल अनेक नई कामनाएं पैदा हो जाती हैं। चूंकि कामनाएं पूरी नहीं होती, कामना आपूर्ति का तनाव मन को बीमार कर देता है। जब तक मन साधनों या वस्तुओं में आसक्त है, मन का तनाव हटना संभव नहीं है। साधनों से आसक्ति हटाने के लिए शरीर से ममता या आसक्ति हटाना आवश्यक है। शरीर से ममता का भाव हटाना, देह में स्थित तनावों से मुक्ति पाना और देह में रहकर देहातीत हो जाना कायोत्सर्ग है।

'कायोत्सर्ग' जैन साधना पद्धति का विशिष्ट शब्द है जिसका अर्थ है काया का उत्सर्ग या त्याग। यहां शरीर-त्याग का अर्थ मृत्यु नहीं वरन् देहासक्ति या शरीर के प्रति ममता का त्याग है। जब देह के प्रति ममता का त्याग होता है तो तनाव से मुक्ति पाते हैं और शांति व सुख की प्राप्ति करते हैं जो नैसर्गिक है। कायोत्सर्ग को व्रण चिकित्सा अर्थात् घावों की चिकित्सा भी कहा है। मन के विकारों से उत्पन्न घावों को ठीक करने के लिए कायोत्सर्ग एक प्रकार का मरहम है। दैनिक जीवन में वे सब क्रियाएं मन पर संस्कार कायम रखती है जो कषाय अर्थात् मान (अहं), माया (कपट) व लोभ की प्रेरणा से संचालित हो। वे मन पर संस्कार ही कायम नहीं करती, अपराध भाव को जन्म देती हैं और क्रिया-प्रतिक्रिया की शृंखला को जन्म देती हैं।

मनोवैज्ञानिकों की मान्यता है कि जाग्रत मस्तिष्क कुल मस्तिष्क का बहुत छोटा हिस्सा है और बहुत बड़ा हिस्सा है अवचेतन मस्तिष्क, जो हमारी विभिन्न गतिविधियों और आवेशों को संचालित करता है। जब तक अवचेतन मस्तिष्क के प्रति जागृति नहीं होगी हमारे कार्य-कलापों व आवेश पर हमारा नियंत्रण नहीं होगा। कायोत्सर्ग में अवचेतन मन, जिसमें पूर्व में संस्कार भरे हैं तक पहुंचने का प्रयास होता है।

कायोत्सर्ग में जब शरीर शिथिल होता है तब जाग्रत मस्तिष्क भी शिथिल हो जाता है परन्तु अवचेतन मन सक्रिय रहता है और उसकी गतिविधियों को साक्षीभाव से देखने से आवेशों व संस्कारों को भी देखने का मौका मिलता है।

शिथिलीकरण अर्थात् देह को शिथिल करने के लिए देह के प्रति ममता भाव हटाकर अंतर्मुखी होना आवश्यक है। शरीर शिथिल करने के लिए 'शवासन' एक सुंदर उपाय है। कायोत्सर्ग-साधना स्वस्थ चित्त व तन के लिए अमोघ उपाय है। श्वास का अभ्यास करते हुए जब मन सध जाए तब शरीर के अंग-अंग को देखने का अभ्यास करना चाहिए।

मनोवैज्ञानिकों की मान्यता है कि जाग्रत मस्तिष्क कुल मस्तिष्क का बहुत छोटा हिस्सा है और बहुत बड़ा हिस्सा है अवचेतन मस्तिष्क, जो हमारी विभिन्न गतिविधियों और आवेशों को संचालित करता है।

श्वास साधना के बाद मन एकाग्र व तीक्ष्ण हो जाए तब मन को सर्वप्रथम नाक के नीचे ऊपर वाले होठ पर जो भी संवेदना हो रही है उसे जाने व देखे। होठ पर सुरसुराहट, खुजली, श्वास का छूना आदि का अनुभव होगा। किसी भी संवेदना की कल्पना नहीं करनी है। जो भी संवेदना महसूस हो रही है उसे ध्यान से जानना व देखना मात्र है। अब धीरे से मन को सिर के तालुरन्ध्र (जो स्थान नवजात शिशु के सिर में सबसे कोमल भाग होता है) पर मन को ले जाकर ध्यान से व धीरज से देखें कि वहां क्या अनुभूति हो रही है? उस भाग पर हो रही किसी भी प्रकार की संवेदना जैसे कुलबुलाहट, धड़कन, फड़कन, सुरसुराहट, पसीना, ठंडक या जो भी अनुभव हो रहा है उसे केवल जाने। किसी भी प्रकार का राग या द्वेष पैदा न करें। केवल जाने और द्रष्टा भाव में बने रहें। इसी प्रकार मन को धीरे से पूरे सिर पर घुमाएं और अनुभव करें कि सिर के पूरे हिस्से पर क्या हो रहा है? यहां पर जो भी हो रहा है उसे समभाव से जानें। सिर से मन, ललाट व चेहरे पर लाएं, फिर मर्दन से कंधे पर लाए। यहां से दायें हाथ से कंधे से होकर ऊपरी भुजा, कोहनी, हाथ, हथेली व पंजों को देखें। इसी प्रकार बायें हाथ से ऊपरी भुजा कोहनी, हाथ हथेली व पंजों को देखें। अब गले से वक्ष, पेट व पेडू देखें और इसके बाद गर्दन से पीठ को ऊपर से नीचे तक देखते हुए कमर तक पहुंचे। इसके बाद दायें कुल्हे से प्रारंभ कर जांघ, घुटने, पिण्डली, टखने, एड़ी, पगतली व पंजे क्रमश: देखें। फिर बायें कुल्हें से प्रारंभ कर बाएं पांव के पंजे तक पहुंचे।

शुरू में इन अंगों को ऊपरी सतह से देखें। फिर धीरे-धीरे मन की तीक्ष्णता बढ़ाते हुए अंगों को गहराई से देखें। जैसे टॉर्च लगाकर या लेजर बीम से देखते हैं वैसे अंगों के अंदर देखें। प्रत्येक अंग में क्या हलचल हो रही है उसे समभाव से जाने व देखें। समस्त शरीर में कुछ संवेदना, दुखद या सुखद या न दुखद न सुखद अनुभव होगी और यह स्वत: हो रही है। इनकी न कल्पना करना है और न विशेष रूप से खोजना है।

यदि संवेदना की अनुभूति न आवे तो निराश भी नहीं होना है। ये संवेदनाएं नैसर्गिक है और हमारा काम एकाग्र होकर अनुभव करना है व इनके प्रति प्रतिक्रिया नहीं करनी है। दुखद संवेदना को हटाने का प्रयास नहीं करना है न इनके प्रति द्वेष करना है, न दुखी होना है और न सुखद संवेदना बनी रहे, इसका प्रयास करना है और न कामना करनी है कि यह बनी रहे। जो जैसा है उसे वैसा जानना है और इनके प्रति राग या द्वेष नहीं करना है।

किसी भी अंग पर यदि संवेदना नहीं मिल रही है तो थोड़ी देर रुक जायें व ध्यान से देखें और यदि मिल जाए तो ठीक, नहीं तो अगले अंग पर चले जाएं। जिस प्रकार सिर से पैर तक यात्रा की थी और उसी प्रकार उल्टे क्रम से पैर से सिर तक यात्रा करनी है। यह यात्रा-क्रम सिर से पैर और पैर से सिर तक लगातार करते रहना है।

यह क्रिया करीब एक घंटे तक सुबह व शाम निश्चित समय व निश्चित स्थान पर करनी चाहिए। यह प्रक्रिया हमें समभाव में बने रहने, अवचेतन मन के प्रति जाग्रत रहने व दुखद या सुखद स्थिति में अविचलित बने रहने में प्रशिक्षित करेगी और धीरे-धीरे प्रतिक्रिया के स्वभाव से ऊपर सही समझ से क्रियाशील बनने में मदद करेगी। अपने आवेशों पर नियंत्रण पा सकेंगे और तनाव से मुक्ति भी। ●

हमारा कर्म ही धर्म बने

■ रामस्वरूप रावतसरे

आदि शंकराचार्य ने कहा है कि जोरदार भाषण, विपुल शब्दों के प्रयोग, शास्त्रों के पाण्डित्यपूर्ण व्याख्यान आदि बुद्धिमानों के मनोरंजन मात्र है, ये मोक्ष की ओर नहीं ले जाते। लेकिन फिर भी हम इन्हीं को ज्यादा अच्छा समझते है। और अपना बहुत-सा समय जोरदार भाषणों को सुनने, पांडित्यपूर्ण व्याख्यानों पर माथापच्ची करने में ही लगे रहते हैं। मोक्ष कैसे और कहां मिल सकता है। इस ओर हमारा ध्यान ही नहीं जाता है।

लगभग यह मानना है कि वैराग्य से ही मोक्ष प्राप्त हो सकता है। फिर तो बहुत से साधु हैं जिन्होंने वैराग्य अपना रखा है। वे मोक्ष को प्राप्त हो जायेंगे, हो गये होंगे। ऐसा नहीं है, सही मायने में 'मैं' का क्षय होना ही मोक्ष है। 'मैं' वैराग्य को धारण करने से ही खत्म नहीं हो सकता। 'मैं' को खत्म करने के लिये हमने जो ऊंच-नीच, अपना-पराया, अच्छे-बुरे का सामाजिक आवरण अपने चारों ओर बना रखा है, उससे बाहर निकलने की आवश्यकता हैं।

जैसे बीज तभी पौधा बन सकता है जब वह अपने आपको मिट्टी के हवाले कर देता है । मिट्टी बीज के सख्त आवरण को नरम बनाती है और उसके बाद उसमें से पौधा अंकुरित होता है । इसी प्रकार हमारे साथ भी है हम मोक्ष तो चाहते है पर अपनी 'अकड़' को अपनी 'मैं' को छोड़ना नहीं चाहते। हमारे गुरु महाराज हमें सहज और सरल जीवन जीने के लिये कहते हैं। लेकिन हम उनके सामने जब तक होते हैं तब तक उनकी बातों पर ध्यान देते हैं और वहां से हटने के बाद फिर उसी 'मैं' के आवरण में चले आते हैं।

कहा भी जाता है कि 'जब तक तेरी खुदी ना टूटे खुदा नजर नहीं आयेगा'। इस खुदी को तोड़ने के लिये किसी भी प्रकार के आयोजन की आवश्यकता नहीं हैं, आवश्यकता है तो बस इसी बात की कि हम जितना अपना सम्मान चाहते हैं उतना सामने वाले का भी करें । बस यहीं से आपके अन्दर सहजता का प्रवेश शुरू होगा जो आपकी समझ को श्रेष्ठता के रास्ते पर ले जायेगा। श्रेष्ठता मान-सम्मान की नहीं, श्रेष्ठता सहज विचारों की, श्रेष्ठता शुचिता की, श्रेष्ठता सब के सम्मान की मन दिमाग में रहने से आपका प्रत्येक कार्य अपने लिये कम औरों के लिये ज्यादा होगा।

गीता में श्रीकृष्ण भगवान के बताये अनुसार जब हम कर्म के योगी कहलाने लगेंगे तब हमें सभी का सामीप्य मिलेगा। यही सामीप्य हमारे 'मैं' के भाव को तोड़ कर हम सब की अवधारणा के साथ हमें मोक्ष की ओर ले जाने में हमारी मदद करेगा। यह संसार कर्म के लिये है, जब तक आदमी कर्मशील रहता है सब की आंखें उसकी ओर लगी रहती है। सभी उससे कुछ-ना-कुछ पाने की अपेक्षा भी पाले रखते हैं। कर्म को अपना धर्म मानकर किया जाना ही 'कर्मयोग' की श्रेणी में आता है। जीवन में चार काल आते हैं । बाल्यवस्था, युवावस्था, प्रौढ़ावस्था और वृद्धावस्था इनमें दो अवस्थाएं इस प्रकार की है कि जीवन के मूल भाव का अहसास ही नहीं होता, लेकिन जब प्रौढ़ावस्था आती है शरीर कमजोर पड़ने लगता है तब कुछ संसार के वास्तविक स्वरूप का दर्शन होने शुरू होने लगते है। लेकिन दबे पांव आने वाली वृद्धावस्था के साथ तो यों लगने लगता है कि उसने जो कुछ किया था वह सब छूटने को है। परिवार में पकड़ कमजोर होने लगती है। आस पड़ोस का व्यवहार बदल जाता है।

हम इन सब को पुनः पाने के लिये उन सब बातों का सहारा लेते है जो शरीर को पुष्ट नहीं बनाकर कमजोर करती है। इस कमजोरी के कारण हम गुस्सा होते हैं। यहीं हमसे भूल होती है। यह संसार छुटने का ही है इसलिये जो सहजता से छूट रहा है उसे छोड़ते रहिये। कुछ भी नहीं होने वाला है। हमें चाहिये कि हमारी शरीरिक क्षमता के अनुसार जो भी कार्य हो सकता है, उसे हम बिना किसी हील-हुज्जत के करते रहे। इसमें स्वार्थ-परमार्थ, अपने-पराये को नही देखें। बाहर की पकड़ को छोड़ते हुए अन्दर की पकड़ को मजबूत करें। जीवन में कभी पतझड़ की बात नहीं आयेगी ।

-अग्रवाल हॉस्पिटल, मनोहरपुर दरवाजे के पास, शाहपुरा जयपुर (राजस्थान)

नवरात्र खोलते हैं बेहतर जीवन का रास्ता

■ सीताराम गुप्ता

पितृपक्ष अथवा श्राद्ध बीतने के साथ ही नवरात्रों का उल्लास हर तरफ नजर आता है। नवरात्रों के साथ ही परिवेश में बदलाव भी साफ-साफ दिखाई पड़ता है। इस बदलाव के कई स्तर और रूप हैं। पहला है ऋतु परिवर्तन। नवरात्रों का आयोजन साल में दो बार किया जाता है। एक है वसंतकालीन नवरात्र और दूसरी है शरदकालीन नवरात्र। वसंत और शरद दोनों ऋतुएं बदलाव की सूचक हैं। इस बदलते मौसम में नवरात्र का आयोजन असल में मनुष्य के बाहरी और अंदरूनी बदलाव में संतुलन कायम करना है।

मनुष्य के लिए बाहरी बदलाव को स्वीकार करना अनिवार्य है। अगर वह बदलते माहौल को मंजूर नहीं करेगा तो उसका अस्तित्व ही संकट में पड़ जाएगा। और इस बाहरी बदलाव को अपनाने के लिए अंदरूनी बदलाव जरूरी है। अगर इंसान के मनोभावों में सही बदलाव हो जाता है तो वह विषम से विषम हालात में भी आसानी से अपना अस्तित्व बनाए रखने में कामयाब हो जाता है। नवरात्रों का आयोजन हमें यह मौका देता है कि हम बदलाव को स्वीकार कर न केवल खुद को बचाए रखे, बल्कि लगातार ज्यादा से ज्यादा सामंजस्य स्थापित कर आगे बढ़ें।

नवरात्रों के दौरान किये जाने वाले विभिन्न अनुष्ठान, व्रत तथा पूजा-अर्चना पर्यावरण की शुद्धि के साथ-साथ मनुष्य की शरीर शुद्धि तथा भावशुद्धि करने में भी सक्षम हैं। व्रत शरीर शुद्धि का पारम्परिक तरीका है। सभी धर्मों में व्रत का महत्व तो है। शरीर की शुद्धि के बाद मन की शुद्धि जरूरी है। अन्य सभी प्रकार के अनुष्ठान शरीर और मन की शुद्धि में सहायक होते हैं।

नवरात्रों का आयोजन शुक्ल पक्ष में ही किया जाता है। शुक्ल पक्ष बढ़ते प्रकाश का प्रतीक है। इस दौरान नवरात्रों का आयोजन इस बात का प्रतीक है कि हम लगातार असत्य से सत्य की ओर, अंधकार से प्रकाश की ओर तथा मृत्यु से अमृत की ओर अग्रसर हों। अपने मनोभावों को सकारात्मक बनाएं, जिसके बिना असत्य और मृत्यु से पार पाना असंभव है। नवरात्र निगेटिव पर पॉजिटिव की जीत का मौका जुटाते हैं।

नवरात्रों के आयोजन का एक और पक्ष भी है। इन दिनों दुर्गा के नौ रूपों की अर्चना की जाती है। ये रूप असल में मनुष्य की विभिन्न मनोदशाओं के परिष्कार से जुड़े हैं। कथा में जिन राक्षसों के संहार के संदर्भ में इन रूपों का जिक्र

नवरात्रों का आयोजन शुक्ल पक्ष में ही किया जाता है। शुक्ल पक्ष बढ़ते प्रकाश का प्रतीक है। इस दौरान नवरात्रों का आयोजन इस बात का प्रतीक है कि हम लगातार असत्य से सत्य की ओर, अंधकार से प्रकाश की ओर तथा मृत्यु से अमृत की ओर अग्रसर हों।

आता है, वे असल में मनुष्य की नकारात्मक प्रवृत्तियों के प्रतीक हैं। राक्षसों का संहार करने वाली देवी की पूजा का अर्थ है अपने मन से नेगेटिव भावों का विसर्जन। अगर हम ऐसा नहीं कर पाते, तो नवरात्रों का आयोजन सार्थक नहीं कहा जा सकता।

जीवन में सुख और दुख दोनों साथ-साथ चलते हैं। कभी दुख ज्यादा, तो कभी सुख। यह वैसे ही जैसे मौसम का चक्र चलता रहता है। हम ध्यानपूर्वक देखें तो पाते हैं कि प्रतिकूल मौसम या अवस्था के बाद एक सुहावना मौसम भी अवश्य आता है। अगर हम इस तथ्य को जान लें तो जीवन सरल हो जाए। निराशा से बच जाएं। इसी से आशावादी नजरिए का विकास भी होता है। इस प्रकार नवरात्रों का आयोजन आध्यात्मिक तौर पर जीवन में समता का भाव जगाने में भी मददगार है।

नवरात्रों का आयोजन बड़ी धूमधाम से किया जाता है, जो हमें आनंद की अनुभूति कराता है। आनंद की अवस्था में हमारे शरीर में तनाव पैदा करने वाले हॉर्मोन खत्म हो जाते हैं और जो हॉर्मोन उत्सर्जित होते हैं, वे हमारी सेहत के लिए अत्यंत लाभदायक होते हैं। ये हमें रोगों से तो बचाते ही हैं, रोग होने पर शीघ्र रोग मुक्ति भी प्रदान करते हैं।

लोग व्रत रखने के साथ-साथ मंदिरों में पूजा के लिए जाते हैं तथा सामूहिक आयोजन भी करते हैं। त्योहारों के साथ सांस्कृतिक आयोजन भी होते हैं, जहां एक-दूसरे से मिलने का मौका मिलता है। अकेला व्यक्ति हमेशा तनावग्रस्त रहता है। इन आयोजनों के कारण लोगों से मिलना-जुलना बेहतर जीवन का एक अच्छा साधन है। तनावमुक्ति मनुष्य के स्वास्थ्य का महत्वपूर्ण तत्व है, इसलिए नवरात्रों का सामाजिक पक्ष भी सीधा हमारे स्वास्थ्य तथा उन्नति से जुड़ा है।

-ए.डी.-106-सी, पीतमपुरा
दिल्ली-110034

महाफलदायी संध्योपासना

■ दिनेश कुमार

भारतीय हिन्दू-संस्कृति पुनर्जन्म तथा कर्म सिद्धांत पर विश्वास करती हैं। हिन्दू-संस्कृति का प्रबल विश्वास है कि मानव द्वारा किये गये प्रत्येक कर्म का प्रतिफल उसे अवश्य ही प्राप्त होता है। जीवन के सुख-दु:ख लाभ-हानि, हर्ष-शोक आदि मनुष्यों के स्वकर्मों के ही फल होते हैं।

कुछ सामान्य नित्यकर्म तो प्रत्येक मानव को करने ही पड़ते हैं, यथा-जागरण, स्नान, भोजन, शयन, शौचादि। ये सभी कर्म यदि सामान्य तथा साधारण रीति से संपन्न किये जायें तो इनका कोई विशेष फल प्राप्त नहीं होता। परन्तु, यदि यही साधारण कार्य शास्त्र सम्मत तरीके से संपादित किये जायें तो धर्माचारण में परिवर्तित हो विशेष फलदायी हो जाते हैं। मनुष्य के जागने से लेकर रात्रि-शयन करने तक के कार्यों को शास्त्र सम्मत ढंग से संपादित करने का कर्मकाण्ड कहा जाता है। षोडशसंस्कारों में 'उपनयन-संस्कार' के अन्तर्गत संध्योपासना को अत्यंत महत्वपूर्ण कर्म माना गया है। वेदों में संध्योपासना को अंत:करण-शुद्धि का मुख्य आधार माना गया है। संध्योपासना द्वारा साधक की दिनचर्या को नियमित बनाने पर जोर दिया जाता है, कदाचित इन्हीं कारणों से ब्राह्मणों के लिए समस्त कर्मों में से संध्योपासना सर्वाधिक आवश्यक बतायी गयी है।

संध्योपासना का समय संधिकाल होता है। दो भिन्न काल के मिलन पर संपन्न की गई उपासना विशेष फलदायी होती है। प्रात:काल में संपन्न की जाने वाली उपासना का समय तब निर्धारित किया गया है जब आकाशमंडल में तारे घिरे होते हैं तथा सूर्यदेव के आगमन की तैयारियां प्रारंभ हो चुकी होती हैं। यदि तारे छिप जायें तथा सूर्य की अरुण लालिमा आकाशमंडल पर छा जाये तो उपासना का मध्यम फल प्राप्त होता है। सूर्योदय के पश्चात संपन्न की गई साधना महत्वपूर्ण नहीं मानी गई है। मध्याह्न की संध्या के लिए वह समय नियत किया गया है जब सूर्य भगवान आकाश के मध्य में होते हैं। सायंकाल की संध्या के लिए वह समय सर्वोत्तम होता है जब भगवान भास्कर के प्रस्थान की तैयारियां पूर्ण हो चुकी होती हैं। यदि सूर्यदेव पूर्णरूपेण गमन कर जायें तो साधना का मध्यम फल प्राप्त होता है। इसके पश्चात तारे उग जाने के बाद की गई साधना फलदायी नहीं मानी गयी है।

भारतीय हिन्दू-धर्मशास्त्रों में संध्योपासना के महत्व के विषय में कहा गया है-

यावन्तोऽस्यां पृथित्यां हि विकर्मस्थापतु वै द्विजा:।

संध्योपासना का नियमित प्रयोग करने से समस्त मनोविकार शांत होते हैं, भावनाओं तथा योग्यता में उच्चता तथा आयु में वृद्धि प्राप्त होती है तथा देश, समाज, कुल, धर्म तथा उपासक का अभ्युदय होता है।

तैषा वै पावनार्थाय संध्या सृष्टा स्वयम्भुवा॥
निशायां वा दिवा वापि यदज्ञानकृतं भवेत्।
त्रैकाल्यसंध्याकरणात् तत्सर्व विप्रणश्यति॥

अर्थात् इस पृथ्वी पर जितने भी स्वकर्म रहित द्विज (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य) हैं, उनको पवित्र करने के लिए ब्रह्मा ने संध्या की उत्पत्ति की है। रात या दिन में जो भी अज्ञानवश विकर्म हो जाते हैं, वे त्रिकाल-संध्या करने से नष्ट हो जाते हैं। इस प्रकार संध्योपासना परम मोक्षदायिनी तथा पापों को हरने वाली मानी गयी है। वस्तुत:, संध्योपासना भगवान अंशुमान की ही उपासना है। सूर्य समस्त जगत को प्रकाश तथा ऊर्जा प्रदान वाले अथाह तेजपुंज के भंडार हैं।

संध्योपासना के मुख्य रूप से चार प्रकार माने जाते हैं- रात्रि-पूर्वाह्नका, पूर्वाह्नका-पराह्नका, पराह्नका-पूर्वरात्रिका तथा पूर्वरात्रि-पररात्रिका- इन चार सन्धिकालों में संध्या संपन्न की जाती है। मध्यरात्रि की संध्या विशेष रूप से योगी तथा मंत्रसाधक करते हैं। साधारणजनों के लिए प्रात: मध्याह्न तथा सायंकाल की तीन संध्या करने का ही विधान है। संध्योपासना में समय का विशेष महत्व है। कहा गया है कि-

स्वकाले सेविता संध्यानित्यं कामदुघा भवेत्।
अकाले सेविता सा च संध्या वंध्या वधूरिव॥

अर्थात समय पर की गई संध्या इच्छानुसार फल देती है और बिना समय की गयी संध्या वंध्या स्त्री के समान होती है।

संध्योपासना में काल के महत्व के साथ-साथ यह भी माना जाता है कि किसी कारणवश यदि काल का उचित निर्धारण न हो पाये तो भी कर्मनिष्ठा बनी रहनी चाहिए। यानी उपासना में श्रद्धा, भावना तथा विश्वास की कमी नहीं होनी चाहिए। संध्योपासना परमपुण्यदायी तथा पापनाशक होती है। इससे उपासक को अपूर्व मनोबल प्राप्त होता है। संध्योपासना का मुख्य उद्देश्य भोगप्राप्ति न होकर कर्म, भक्ति और ज्ञान इन तीनों का एकीकरण करना है। संध्योपासना में संपादित किये जाने वाले आचमन, संकल्प, प्राणायामादि द्वारा क्रिया, न्यास, जपादि में उपासना तथा ओंकारादि मंत्रों में ज्ञान तत्व विशेष रूप से दृष्टिगोचर होता है।

संध्योपासना का बीजमंत्र ओंकार है तथा गायत्री मंत्र प्रधान मंत्र है। प्राणवायु को नियमित करने के लिए प्राणायाम को विशेष महत्व दिया जाता है। प्राणायाम द्वारा श्वास के व्यय से कम करके आयु को बढ़ाया जाता है। समयाभाव होने पर यदि कोई उपासक तीन बार आचमन करके गायत्रीमंत्र से प्राणायाम तथा तीन बार सूर्य को अर्घ्य प्रदान कर दे तब भी उसकी ईशोपासना पूर्ण मान ली जाती है।

संध्योपासना का नियमित प्रयोग करने से समस्त मनोविकार शांत होते हैं, भावनाओं तथा योग्यता में उच्चता तथा आयु में वृद्धि प्राप्त होती है तथा देश, समाज, कुल, धर्म तथा उपासक का अभ्युदय होता है। ऐसा शास्त्रों में कहा गया है। अत: प्रतिदिन संध्योपासना करनी चाहिए। ●

मनोरथ सिद्धि के लिए दुर्गा सप्तशती का पाठ

■ आचार्य कालीचरण मिश्र

श्री दुर्गा सप्तशती दैत्यों के संहार की शौर्य गाथा से अधिक कर्म, भक्ति और ज्ञान की ऐसी त्रिवेणी है, जो सारे मनोरथों को पूर्ण करती है। श्री दुर्गा सप्तशती श्री मार्कण्डेय पुराण का एक अंश है। यह देवी माहात्म्य धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चारों पुरुषार्थों को प्रदान करने में सक्षम है। ऐसा अनेक विद्वानों का अनुभव है। सप्तशती में कुछ ऐसे स्रोत एवं मंत्र हैं, जिनके विधिवत परायण से इच्छित अभिलाषाओं की पूर्ति होती है। इनमें से कुछ मंत्र अत्यंत लोकप्रिय एवं शीघ्र फल देनेवाले हैं।

कल्याणकारी मंत्र

सब प्रकार के कल्याण के लिए यह मंत्र प्रभावशाली माना गया है।

सर्व मंगल मांगल्ये शिवे सर्वार्थ साधिके।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोस्तु ते॥

इसी तरह बाधा मुक्ति एवं धन-पुत्रादि की प्राप्ति के लिए इस मंत्र का जप भी फलदायी है:

सर्वाबाधाविनिर्मुक्तो धन धान्य सुतान्वितः
मनुष्यो मत्प्रसादेन भवष्यति न संशय॥

देवताओं को स्वयं देवी दुर्गा द्वारा दिया गया यह वरदान है। आरोग्य एवं सौभाग्य की प्राप्ति के लिए अर्गला का यह मंत्र भी चमत्कारिक फल देनेवाला है:

देहि सौभाग्य आरोग्यं देहि मे परमं सुखम्
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि॥

श्री दुर्गा सप्तशती ऐसे ही सिद्ध मंत्रों का अक्षय कोष है। देवी आराधकों के अनुसार यदि प्रतिदिन संपूर्ण सप्तशती का पाठ संभव न हो सके तो कवच, अर्गला, कीलक, मध्यम चरित्र एवं सिद्ध कुंजिका के नित्य पाठ से न केवल संकट दूर होते हैं, जीवन का अभ्युदय भी होता है। मनोकामनाएं भी पूर्ण होती हैं।

कुंडलिनी जागरण में सहायक

कुंडलिनी जागरण में भी श्री दुर्गा सप्तशती का पाठ सहायक होता है। देवी के कवच में नव दुर्गाओं के नाम दिये गये हैं। नवरात्रों में प्रत्येक दिन एक विशिष्ट दुर्गा के पूजन का भी विधान है। इन नवदुर्गाओं की पूजा, अर्चना एवं उनसे संबंधित चक्र पर ध्यान लगाने से वह चक्र जागृत हो जाता है और साधक को उस चक्र विशेष की जागृति से मिलनेवाली सिद्धियां प्राप्त हो जाती हैं।

नवदुर्गा की महिमा

मार्कण्डेय पुराण के देवी माहात्म्य प्रसंग के अनुसार, मार्कण्डेयजी ने ब्रह्माजी से मनुष्यों की सब प्रकार से रक्षा करनेवाले परम गोपनीय साधन की जिज्ञासा की। ब्रह्माजी ने उनसे कहा कि ऐसा साधन तो एक देवी का कवच है, जो परम गोपनीय, पवित्र और संपूर्ण प्राणियों का उपकार करनेवाला है। देवी की नौ मूर्तियां हैं, जिन्हें 'नवदुर्गा' कहते हैं। यथा-

प्रथम शैलपुत्री- शैलपुत्री अर्थात पार्वती। इन्हें सबकी अधीश्वरी माना गया है। हिमालय की तपस्या एवं प्रार्थना से प्रसन्न हो देवी ने उनकी पुत्री के रूप में जन्म लिया, अतः इनका नाम 'शैलपुत्री' है। नवरात्र के प्रथम दिन शैलपुत्री के रूप की पूजा-अर्चना का विधान है। कुंडलिनी जागरण के इच्छुक इस दिन मूलाधार चक्र में चित्त स्थिर कर साधना प्रारंभ करें। शैलपुत्री की पूजा एवं ध्यान से मूलाधार चक्र जागृत हो साधक को सिद्धियां उपलब्ध कराता है।

द्वितीय ब्रह्मचारिणी- कहा गया है, सच्चिदानंद ब्रह्मस्वरूप की प्राप्ति कराना ही जिनका स्वभाव हो, वे ब्रह्मचारिणी हैं। नवरात्रि के दूसरे दिन उनकी पूजा की जाती है। इनके पूजन से स्वाधिष्ठान चक्र जागृत होता है तथा साधक को उससे संबंधित सिद्धियों का अनुभव होने लगता है।

तृतीय चंद्रघंटा- इसकी पूजा नवरात्रि के तृतीय दिन होती है। चंद्रघंटा अर्थात चंद्रः घण्टाया यस्याः सा- आल्हादकारी चंद्रमा जिनकी घंटा में स्थित हो। चंद्रघंटा की पूजा मणिपूर चक्र जागृत करती है और साधक को इस चक्र से संबंधित सिद्धियां मिलती हैं।

चतुर्थ कूष्मांडा- त्रिविध तापयुक्त संसार जिन देवी के उदर में स्थित हो वे कूष्मांडा कहलाती हैं। चतुर्थ नवरात्रि को उनकी पूजा एवं अनाहत चक्र पर चित्त स्थिर करने से यह चक्र जाग्रत हो उठता है।

पंचम स्कंदमाता- छांदोग्यश्रुति के अनुसार भगवती की शक्ति से उत्पन्न सनत्कुमार का नाम स्कंद है। अतः वे स्कंदमाता कहलाती हैं। पंचम नवरात्रि को स्कंद माता का पूजन एवं विशुद्ध चक्र पर ध्यान साधक के इस चक्र को जागृत कर देता है।

षष्ठ कात्यायनी- देवताओं की कार्यसिद्धि के लिए देवी महर्षि कात्यायन के आश्रम में प्रकट हुई। महर्षि कात्यायन ने उन्हें अपनी कन्या माना, अतः वे कात्यायनी कहलायीं। नवरात्र के छठवें दिन कात्यायनी देवी की पूजा और आज्ञा-चक्र पर ध्यान लगाने का परामर्श दिया जाता है। इससे आज्ञा चक्र जागृत होता है।

सप्तम कालरात्रि- दुर्गा के कालनाशक रूप को कालरात्रि कहा जाता है। नवरात्र के सप्तम दिवस इनकी पूजा होती है।

अष्टम महागौरी- पूर्णतः गौरवर्णी होने के कारण यह नाम दिया गया है। आठवें दिवस इनकी पूजा का विधान है।

नवम सिद्धिदात्री- जैसा नाम से स्पष्ट है, दुर्गा का यह रूप समस्त प्रकार की सिद्धियों का प्रदाता है।

पातंजलि योग प्रदीप में सप्त चक्रों का वर्णन है। ये हैं- मूलाधार, स्वाधिष्ठान, मणिपूर, अनाहत, विशुद्ध, आज्ञा एवं सहस्रार चक्र।

कुछ विद्वानों ने मध्य ललाट में भानु चक्र, ऊर्ध्व ललाट में सोमचक्र तथा मध्य कपाल में निर्वाण चक्र की स्थिति का भी उल्लेख किया है। कालरात्रि, महागौरी एवं सिद्धिदात्री देवियों की उपासना से इन्हीं चक्रों की जागृति का फल भी बताया गया है। कुंडलिनी जागरण के इच्छुक लोगों को किसी योग्य गुरु के मार्गदर्शन में ही इस साधना में प्रवृत्त होना चाहिए। कुछ लाभकारी मंत्र इस प्रकार हैं:

विपत्ति नाश के लिए-

शरणागतदीनार्त परित्राण परायणे।
सर्व स्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोस्तु ते॥

सुलक्षणा पत्नी की प्राप्ति के लिए
पत्नी मनोरमां देहि मनोवृत्तानुसारिणीम्।
तारिणी दुर्गसंसार सागरस्य कुलाद्भवाम॥

शक्ति प्राप्ति के लिए-

सृष्टि स्थिति विनाशानां शक्तिभूते सकालनि।
गुणाश्रये गुणमये नारायणि नमोस्तु ते॥

वारों का विज्ञान

■ राकेश मधुसूदन

अनादिकाल में भी हिन्दुओं का काल-ज्ञान अद्भुत था। कालमाधव, ब्रह्मपुराण, सिद्धांत-शिरोमणि, ब्रह्मस्फुरसिद्धांत, ज्योतिर्विदाभरण तथा ज्योतिषशास्त्र के अनेक ग्रंथ में काल-ज्ञान संबंधी विवेचना बड़े वैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत की गई है। इस बात में तनिक भी संदेह नहीं है कि समस्त विश्व में काल-निर्धारण का आधार भारतीय काल-ज्ञान ही रहा है। विश्व के धर्म अपनाये गये काल-ज्ञान के पीछे कोई वैज्ञानिक कारण नहीं बता सकते, किन्तु हिन्दू-संस्कृति द्वारा अपनाये गये कालक्रम के सिद्धांत पूर्णत: वैज्ञानिक हैं और इसी कारण ये सिद्धांत विश्वभर में बेहिचक अपनाये गये।

भारतीय परम्परा में वर्ष का प्रारंभ चैत्र की शुक्ल प्रतिपदा से माना जाता है। इसका कारण यह है कि चैत्र शुक्ल प्रतिपदा को ही इस कल्प का प्रारंभ हुआ था।

जहां तक सप्ताह का प्रश्न है तो इसके संबंध में भी यही बात है कि भारतीय दिन या वारों का क्रम ही समस्त विश्व में प्रचलित है। भारतीय वारों में रविवार के बाद सोमवार और सोमवार के बाद मंगलवार आदि आने का क्या कारण है? यह प्रश्न स्वाभाविक रूप से उठ सकता है। वास्तव में, सप्ताह के दिन या वारों के क्रम के पीछे स्पष्ट वैज्ञानिक कारण हैं जो बड़ी सूझ-बूझ और चिंतन-मनन के बाद निर्धारित किये गये हैं।

भारतीय मनीषियों ने एक सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक एक दिन माना। उनके अनुसार सूर्योदय के साथ ही दूसरा दिन या वार प्रारंभ होता है। सायंकाल, मध्यरात्रि या ब्रह्ममुहूर्त से वार का प्रारंभ विशेष अवसरों पर ही माना जाता है। सूर्योदय से पूर्व मध्यरात्रि के बाद होने वाले संध्यादि धार्मिक कृत्यों में अर्द्धरात्रि से ही दिन का प्रारंभ मान लिया जाता है, किन्तु ज्योतिषशास्त्र के अनुसार सूर्योदय से ही दूसरे वार का प्रारंभ होता है। इस नियम को इतना महत्व दिया गया है कि यदि सूर्योदय में एक पल का भी विलंब हो तो जन्म-पत्रिका में पहला दिन ही लिखा जाता है। सूर्योदय से दिन का प्रारंभ मानने का कारण यह है कि सृष्टि की उत्पत्ति सूर्योदय के समय ही हुई थी। अत: दिन का प्रारंभ सूर्योदय से मानना उचित ही है।

वारों की संख्या सात निर्धारित की गई है। इन सात दिनों के समूह को 'सप्ताह' कहा जाता है। प्रश्न उठता है कि सप्ताह के दिन सात ही क्यों हैं? दरअसल, सप्ताह के सात दिन निर्धारित करने के पीछे भी वैज्ञानिक कारण हैं। ब्रह्माण्ड में सात ग्रह सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं जो सृष्टि को प्रभावित करते हैं। इनमें से 'सूर्य' सृष्टि को जीवन प्रदान करने वाला, संरक्षक और प्रधान है। इसी कारण उसे सप्ताह के वारों में पहले स्थान पर रखा गया। हजारों वर्ष पूर्व भारतीय मनीषियों ने ग्रहों के कक्षा-क्रम के विषय में जान लिया था। इस संबंध में सूर्यसिद्धांत में आया है-

मन्दामरेज्यभूपुत्रा: सूर्यशुक्रेन्दुजेन्दव:।
परिभ्रामन्त्योऽधस्था: सिद्धविद्याधरा। घना:॥

अर्थात् शनि, बृहस्पति, मंगल, सूर्य, शुक्र, बुध और चंद्र इस क्रम से एक-दूसरे के नीचे स्थित ये ग्रह पृथ्वी से दूर स्थित हैं। चन्द्र और पृथ्वी के बीच मेघ, विद्याधर और सिद्ध विचरते हैं।

सप्ताह में वारों के क्रम के विषय में सूर्यसिद्धांत ग्रंथ में ही एक अन्य श्लोक प्राप्त होता है जो इस पर समुचित प्रकाश डालता है-

मन्दादध: क्रमेण स्युश्चतुर्था दिवसाधिपा।
वर्षाधिपतयस्तावत् तृतीयश्च प्रकीर्तिता॥
ऊर्ध्वक्रमेण शशिनो मासानामधिपा: स्मृता:।
होरेशा: सूर्यतनयाद् अधोऽध: क्रमशस्तथा।

शनि के नीचे-नीचे क्रमश: प्रत्येक चौथा ग्रह दिन का अधिपति होता है। इसी क्रम से नीचे स्थित ग्रह वर्ष का अधिपति होता है। और चंद्र के ऊपर क्रम से महीनों का अधिपति होता है तथा शनि के नीचे स्थित ग्रह क्रम से होरा का अधिपति होता है।

उपरोक्त तथ्य को हम इस प्रकार भी समझ सकते हैं। ब्रह्माण्ड में ग्रहों की कक्षाएं इस क्रम से हैं- पृथ्वी, चन्द्र, बुध, शुक्र, सूर्य, मंगल, बृहस्पति और शनि अर्थात् पृथ्वी से चन्द्र सबसे निकट और शनि ग्रह सबसे दूर स्थित है। इस तथ्य को आधुनिक वैज्ञानिकों ने भी प्रमाणित कर दिया है, जिस वार को सूर्योदय होता है, होरा भी उसी ग्रह की होती है। होरा शब्द अहोरात्र (दिन-रात) के बीच के दो अक्षर लेकर बना है। सृष्टि के निर्माण के समय सूर्योदय था, अत: सृष्टि की प्रथम होरा का स्वामी सूर्य ही हुआ। जब प्रथम होरा का स्वामी सूर्य हुआ तो उसके बाद क्रम से शुक्र, बुध, चन्द्रमा, शनि, बृहस्पति और मंगल- ये छह ग्रह होराओं के स्वामी हुए। फिर, पुन: आठवीं होरा का स्वामी सूर्य हुआ। इस प्रकार चौबीस होराएं बीतने पर एक दिन अथवा एक अहोरात्र पूरा होता है। इसी होरा को पाश्चात्य प्रणाली में घंटा कहा जाता है। चूंकि प्रथम होरा का स्वामी सूर्य था, अत: सप्ताह के प्रथम वार का नाम पड़ा- सूर्यवार या रविवार।

पच्चीसवीं होरा चन्द्र से प्रारंभ होने के साथ ही दूसरा दिन प्रारंभ हुआ, अत: दूसरे दिन का नाम चंद्र के नाम पर 'सोमवार' पड़ा। इसी क्रम से सातों दिनों के नाम निर्धारित हुए। दिनों का यही आधार पूरे विश्व द्वारा अपनाया गया।

सप्ताह के दिनों के निर्धारण में चौथे ग्रह का नियम भी प्रचलित है। इसके अंतर्गत माना जाता है कि सूर्य से चौथा ग्रह वाराधिपति होता है और आगे इसी क्रम से दिनों के अधिपति का निर्धारण होता है, जैसे- सूर्य से चौथा चंद्र, चंद्र से चौथा मंगल, मंगल से चौथा बुध, बुध से चौथा बृहस्पति, बृहस्पति से चौथा शुक्र, शुक्र से चौथा शनि। इस प्रकार मनीषियों ने सप्ताह के वारों का निर्धारण किया। वारों के निर्धारण में चौथे ग्रह की गणना का सिद्धांत ही क्यों अपनाया गया? इस प्रश्न के उत्तर में सूर्यसिद्धांत ग्रंथ का पूर्व वर्णित श्लोक इस तथ्य को स्पष्ट करता है कि होरा के नियम के आधार पर ही चौथा ग्रह दिन का स्वामी माना जाता है। यही क्रम सृष्टि के प्रारंभ से अब तक चला आ रहा है जो पूर्णरूपेण वैज्ञानिक है। ●

पति-पत्नी का मिलन है एक अनवरत यात्रा

■ पायलट बाबा

शादी संबंध एक यात्रा है। यह एक लंबी यात्रा है। इसमें संसार की, समाज की, अहंकार की पुष्टि है। इसमें लक्ष्य की प्राप्ति नहीं है। इसमें हमेशा उम्मीदों की लपट जलती है। पर यह सब मात्र एक आशा ही होती है। प्रेम में भाषा नहीं है। यह तो द्वार है। मंदिर के भीतर प्रवेश करने का। पर दुनिया के लोगों में भाषा है। संस्कृति है। भाषा और संस्कृति से भी ज्यादा महत्वपूर्ण शक्तिशाली मन है। मन का अहंकार। मन की विभिन्नताएं। मन हमेशा परेशान करता है।

भारत के लोगों की एक अपनी पहचान है और पश्चिम के लोगों की अपनी पहचान। भारत के लोगों में मर्यादा है, विश्वास है, समर्पण है, प्रतीक्षा है। और ये सब कुछ भी नहीं है। पश्चिम में केवल फ्रीडम है। भारत के मन और पश्चिम के मन में अंतर है। पश्चिम का मन ज्यादा ऊपर उठ गया है। वे अपनी स्वच्छंदता को आजादी कहते हैं। लोग संबंध को खेल समझते हैं। अगर दोनों तरफ के लोग मन को गिरा दें। मन को छोड़ दें। या मन से आगे बढ़ जाएं तो शुद्ध मानव दोनों हो सकते हैं। भारतीय संस्कृति में प्रेम प्रभु कृपा है और शादी संस्कार है कई एक जन्मों का।

पति-पत्नी का मिलन मात्र संयोग नहीं माना जाता बल्कि कई एक जन्मों से चली आ रही एक यात्रा जो अतृप्ति को तृप्ति में बदलकर आगे की यात्रा में निकल जाना। भारत में जब तक लोग मोक्ष को नहीं प्राप्त कर पाते तब तक यह यात्रा बनी रहती है।

भारत के पति-पत्नी एक दूसरे की धरोहर, संपदा हैं। जो संस्कारवश मिलते हैं। यह भावात्मक है, सृजनात्मक है और प्रकृति के गुणों से प्रभावित है। निश्चितता इसमें बनी है। तभी तो भारत की महिलाओं को देवी कहा गया है।

प्रेम में दोनों होते ही नहीं- पर संबंध में दोनों होते हैं। दोनों का मन होता है। दोनों की शारीरिक, मानसिक भोग की अतृप्ति होती है। प्रेम में जब दोनों खो जाते हैं तो किसी को अपनी संपत्ति क्यों समझेंगे पर संबंध में यह सब है। एक-दूसरे को अपनी संपत्ति समझते हैं। क्योंकि संबंध में अहंकार है। शादी में अहंकार है। अगर आप लोग मन को गिरा दें तो सारा अंतर भेद मिट जाएगा और जीवन की सारी परेशानियां भी दूर हो जायेंगी। पर मन के बिना समझ में भी नहीं आएगा। मन के बिना प्रेम का प्रवाह है। और इस प्रवाह में आगे सागर तक जा सकते हैं।

इतना होने पर भी आपको याद रखना होगा कि प्रेम अंतिम लक्ष्य नहीं है। प्रेम अंतिम समाधि भी नहीं है। यह लंबी यात्रा कर सकता है। पर यह पूरा नहीं कर सकता। अंत में आपको इसके आगे जाना ही होगा।

प्यार करो, प्यार करना सीखो, प्यार करने वालों को देखो, प्यार हो जाने दो। और एक दिन उस परमात्मा के प्रेम सागर में गिर जाओ। जिस दिन प्रेम के दरवाजे से भीतर चले जाओगे उसी दिन तुम अपने मूल घर को वापस हो जाओगे।

जब प्रेम में खो जाओ तो होश मत खोना। अपनी दृष्टि को मत खोना। मन के साथ मत जाना। नहीं तो अच्छे-बुरे के चक्रव्यूह में फंस जाओगे। कुछ भी अच्छा नहीं है। कुछ भी बुरा नहीं है। कुछ भी पाना नहीं है। कुछ भी खोना नहीं है। जीवन को इतना सरल बना दो कि जीवन वैतरणी बन जाए, मोक्षदायिनी बन जाए।

क्योंकि प्रेम प्रेम है, पड़ाव नहीं। इसमें अनुभव का सागर है। इसमें दावा नहीं होता। सब कुछ घटता है। जब घट जाएगा तब जान जाओगे। तब संबोधि बन जाओगे। जब तक नहीं जानते हो तब तक अबोध हो। यह विश्वास जिस दिन लुप्त हो जाएगा। प्रेम की सारी झलकें खो जायेंगी, तब तुम खुद को जान जाओगे। ●

उचित दक्षिणा

■ डॉ. विजयप्रकाश त्रिपाठी

रक्षा बंधन का पुनीत पर्व। बीकानेर नरेश का भव्य दरबार लगा हुआ था। राजद्वार पर ब्राह्मणों की एक बड़ी पंक्ति लगी थी। उसी पंक्ति के मध्य मालवीयजी एक नारियल व रक्षासूत्र लिए खड़े थे। शनैः शनैः पंक्ति छोटी होती जा रही थी। प्रत्येक ब्राह्मण, नरेश की कलई में राखी बांधता, परिचय देता और फिर दक्षिणा के रूप में एक रुपया प्राप्त कर प्रसन्नता से घर लौट जाता था।

अब मालवीयजी का नंबर आया तो वे नरेश के पास पहुंचे। राखी बांधी, नारियल भेंट किया और देववाणी संस्कृत में स्वरचित शुभाशीष दिया। नरेश के मन में इस विद्वान ब्राह्मण का परिचय जानने की इच्छा हुई। जब उन्हें मालूम हुआ कि यह तो मदनमोहन मालवीय हैं तो वह बहुत प्रसन्न हुए और अपने भाग्य की मन ही मन सराहना करने लगे। मालवीयजी ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की रसीद उनके समक्ष रख दी। बीकानेर नरेश ने भी तत्काल एक सहस्र मुद्रा लिखकर हस्ताक्षर कर दिए। बीकानेर नरेश भली प्रकार यह जानते थे कि मालवीयजी द्वारा एकत्रित किया जाने वाला समस्त धन विश्वविद्यालय के निर्माण कार्यों में ही व्यय होने वाला है।

मालवीयजी ने विश्वविद्यालय की समूची रूपरेखा बीकानेर नरेश के समक्ष रख दी। उस पर संभावित व्यय तथा समाज को होने वाला लाभ भी बताया, तो बीकानेर नरेश मुग्ध हो गए ओर सोचने लगे, इतने बड़े कार्य में एक सहस्र मुद्रा में क्या होने वाला है? उन्होंने पूर्व लिखित राशि पर दो शून्य और बढ़ा दिए, साथ ही कोषाध्यक्ष को एक लाख मुद्राएं प्रदान करने का आदेश दे दिया।

–86/323, देवनगर-कानपुर-208003

आज संसार को करुणा चाहिए

■ डॉ. नरेन्द्र शर्मा 'कुसुम'

आज के भौतिकता प्रधान युग में हमें इतनी फुर्सत कहां है कि हम उन सरोकारों के बारे में सोचें जिनसे मानवता का गहरा संबंध है। मसलन, मैत्री, करुणा, दया, क्षमा जैसे सरोकारों के बारे में हम यदा-कदा ही सोचते होंगे। हमारा पक्का सोच यह बन गया है कि ये मात्र दार्शनिक अवधारणाएं हैं, इनसे हमारा क्या संबंध। हमारे आज के जीवन के हिसाब से ये नितांत अव्यावहारिक है। संत, महात्माओं, दार्शनिकों के लिए ये बुद्धि-विलास के विषय हो सकते हैं। पर आज की दौड़ती-भागती दुनिया में इन बातों पर विचार करना महज वक्त की बर्बादी है। इस दौड़ में, हम ऐसे अनुपयोगी विषयों पर बात करने के कारण पिछड़ जायेंगे।

आज के भौतिकतावादी मनुष्य का ऐसा सोच नितांत निराशाजनक है। यह आज के समय की विडम्बना भी है। जिन मानवीय गुणों पर मानवता टिकी है उनकी उपेक्षा करके क्या हम मानवता को बचा सकते हैं। अब 'करुणा' को ही लें। क्या आज की दुनिया को करुणा और करुणाशील लोगों की जरूरत नहीं है? स्वार्थान्ध हुए लोग जब निष्करुण होकर अपने मानवीय पक्ष को भूल रहें और परपीड़ा से आंखें फेर लें तो क्या यह मानवता के भविष्य के लिए एक अशुभ संकेत नहीं है? जहां धन-दौलत से प्रमत्त, शक्ति और सत्ता से गाफ़िल लोगों को अपने असहाय, अभावग्रस्त भाई-बहनों का दु:ख दर्द भीतर से हिला न देता हो तो क्या इसे वास्तव में एक मानवीय समाज कहा जा सकता है। जहां भूखे, दरिद्र, मुफलिस, लोगों की आहों का जिन पर कोई असर न होता है और जो उनकी पीड़ा को महसूस करके उनके दु:ख-निवारण के लिए दिलो-जान से तैयार न रहते हों ऐसे लोग क्या एक आदर्श समाज-संरचना के अहम हिस्सा बन सकते हैं? निष्करुण लोग मानवीय संवेदना से शून्य होते हैं इसलिए वे दूसरों के दुख-दर्द से हमेशा आंखें चुराते रहते हैं।

कहना न होगा करुणा मानवता का सर्वोच्च गुण है। गहरी संवेदना से सहानुभूति, समानुभूति और करुणा का जन्म होता है। सभी प्राणियों के प्रति करुणा के भाव से मानवता का पोषण होता है। आदमी की नस्ल सुधरती है। संसार के प्राय: सभी महान पुरुष करुणाशील रहे हैं और उन्होंने हमें करुणाशील होने का पाढ़ भी पढ़ाया है। महात्मा बुद्ध, महावीर, ईसा मसीह, गांधी आदि की करुणा तो जगजाहिर है। एक करुणाशील व्यक्ति का हृदय सबके दर्द को अपना दर्द समझता है और उसे अपने दिल में बहुत शिद्दत से महसूस करता है-

संसार दु:खालय है, इसलिए इसे करुणा की बहुत जरूरत है। करुणा, त्याग की भी जननी है, जो करुणाशील होगा वह दूसरों के लिए त्याग करने के लिए तैयार रहेगा। मनुष्य होने की यह पहली निशानी है। पशुओं में यह बात नहीं होती।

खंज़र चले किसी पर, तड़पते हैं हम 'अमीर'
सारे जहां का दर्द हमारे ज़िगर में है।

दरअसल, करुणा का जन्म संवेदना की कोख से होता है। संवेदना आदमी-आदमी के बीच एक सेतु का काम करती है। संवेदना अपने करुणास्वरूप में तमाम कायनात को अपने स्नेहसूत्र में बांधती हैं। करुणा किसी भी प्रकार के पार्थक्य की खाई को पाट देती है। करुणा के राज्य में कोई छोटा नहीं कोई बड़ा नहीं। क्योंकि हमारा 'परमपिता' करुणा सिन्धु है इसलिए उसकी करुणा सबके लिए बराबर है। करुणा के प्रभाव से जाति, धर्म, वाणी, वेश की सरहदें एक हो जाती हैं, इनके बीच की दीवारें ढह जाती है। इंसानियत ही सबका धर्म बन जाता है।

संसार दु:खालय है, इसलिए इसे करुणा की

बहुत जरूरत है। करुणा, त्याग की भी जननी है, जो करुणाशील होगा वह दूसरों के लिए त्याग करने के लिए तैयार रहेगा। मनुष्य होने की यह पहली निशानी है। पशुओं में यह बात नहीं होती।

संसार के सभी धर्म 'करुणा' को अहमियत देते हैं। क्योंकि करुणा हमें एक दूसरे से बांधती है इसलिए वह मज़हब की आत्मा है। आज के इस भौतिकता संकुल संसार को करुणा से पोषित एक ऐसे धर्म की आवश्यकता है जिससे इंसानियत का वजूद हमेशा बरकरार रहे।

ऐसा मज़हब करुणा के बिना संभव नहीं। हिंसा, नफरत, विद्वेष, असमानता जैसी दुष्प्रवृत्तियों के दौरे में करुणा की हमें बहुत बड़ी जरूरत है। 'दिनकर' के साथ हमारे मन में भी यह प्रश्न कौंध रहा है-

धर्म का दीपक, दया (करुणा) का दीप,
कब जलेगा, कब जलेगा,
विश्व में भगवान?
कब सुकोमल ज्योति से अभिसिक्त हो,
सरस होंगे जली-सूखी रसा के प्राण?
(कुरुक्षेत्र)

हमें विश्वास है कि करुणा के स्नेह से भीगी विश्व-प्रेम की बाती ही धर्म के दीपक को ज्योतित करेगी।

-7, च-2, जवाहर नगर
जयपुर-302004 (राजस्थान)

जीवन के लिए हंसना जरूरी है

■ साध्वी राजीमती

महिला ने डॉक्टर से कहा- मुझे अजीर्ण की शिकायत रहती है। डॉक्टर ने पूछा- मैं जानना चाहता हूँ कि तुम्हारी खुराक संतुलित है या नही? कहीं अपोषण और कुपोषण की स्थिति तो नहीं है? दोनों ही नहीं हैं, महिला ने स्पष्टता से डॉक्टर से कहा। तब लगता है तुम्हारे जीवन में हास्य-रस की कमी है। हास्य का उपयोग करो फिर बताना, क्या होता है? एक सप्ताह की अवधि पर्याप्त थी। बीमारी निकल गई।

केलिफोर्निया की ऐसी ही एक और घटना है। एक बहन सदा उदास रहती। मरने तक की तैयारी। आखिर किसी ने बताया कि नसों में भारी विष जमा हो चुका है। उसे सुझाया गया कि एकांत में तीन बार मुक्त हास्य किया करो। कार्लाइल ने बहुत सुंदर कहा है कि जो एक बार अच्छी तरह दिल खोलकर हँसता है, अपने जीवन में वह ऐसा दुराचारी कभी हो नहीं सकता कि उसका पुन: सुधार न हो सके। हँसी मन की गाँठें खोलती है। मस्तिष्क से शरीर पर उतरने वाली सभी बीमारियों का हँसी अर्थात मन का प्रसन्न भाव, उल्लास और भीतर की पुलकन अचूक इलाज है। वह ऐसे बीमारियों को रोकती है जैसे चाँदनी अंधेरे को।

दुनिया में प्रसन्नता नामक औषधि का कोई विकल्प नहीं है, क्योंकि इस अनुपान के साथ ही शेष दवाइयाँ काम करती हैं। भोजन करते समय यदि मन प्रसन्न है तो भोजन का स्वाद बढ़ जाएगा। परोसने वाली बहन और रसोई का आँगन भी खिल उठेगा। अगर भोजन करते समय किसी दिन प्रसन्नता के विपरीत प्रसंग उपस्थित होने की स्थिति आ जाए तो प्रयत्नपूर्वक मन को शांत कर लें। प्राकृतिक सौंदर्य का अवलोकन करते हुए अथवा किसी सुखद घटी घटना या घटने वाली है, यह सोचते हुए मन को हल्का बना लें। किसी देवता की पूजा करते समय मन का प्रसन्न होना जितना जरूरी है, उतना ही भोजन करते समय। यह कथन यथार्थ ही नहीं, पूर्ण मनोवैज्ञानिक है। जिन-जिन व्यक्तियों ने इस नियम के अनुसार स्वयं को नहीं बरता वे नीरस जिंदगी ही जी सके, सरस नहीं। इसलिए आदर्श एवं सफल जीवन जीने वाले व्यक्तियों ने यह सलाह दी है कि अपना दैनिक कार्यक्रम बनाते समय हँसी-खुशी की व्यवस्था भी कर लें अथवा बहुत सारे दैनिक कर्म बिगड़ जाएँगे और आप थक जाएँगे। यही थकान शरीर में अपच, कब्ज जैसी कुछ बीमारियों को उत्पन्न करके मन के जगत् को घबराहट से भर देगी। अत: इस बात पर विश्वास पैदा करें कि प्रसन्नता एक देवता है, कल्पवृक्ष है।

प्रसन्नभाव को देवता कहा गया है, क्योंकि देवता उसी के पास आते हैं जो प्रसन्न होता है। प्रसन्न रहने वाला व्यक्ति कोई भयंकर पाप नहीं कर सकता।

प्रसन्नता शरीर और मन दोनों की शुद्धि चिकित्सा है, क्योंकि प्रसन्न मन के उत्पन्न होते ही पूरे शरीर की कोशिकाएँ हँसने लगती हैं। शरीर और मन दोनों में संतुलन और लयबद्धता उत्पन्न होती है। जो शारीरिक श्रम नहीं करते उनके शरीर में तो जड़ता व्याप्त होती ही है, धीरे-धीरे मन भी निष्क्रिय, जड़ होने लग जाता है। कहते हैं कि डॉक्टर हैनरी लिंक रोगी की तब तक चिकित्सा नहीं करता था जब तक कि वह हँसते हुए दौड़ नहीं लगा लेता था। उसका मानना था कि दौड़ने से दिमाग के गति संचालक केंद्रों का पूरा व्यायाम हो जाता है और दायाँ मस्तिष्क जो हमारे भावनात्मक विकास के लिए जिम्मेदार है वह सक्रिय हो जाता है। इसके साथ ही रक्त प्रवाह भावोत्तेजक केंद्रों से हटकर पूरे शरीर में संतुलित बहने लग जाता है। वह पहुँचता है तब तक उसके शरीर में घनात्मक, रचनात्मक विचारों की सूक्ष्मता बढ़ जाती है। रोगी को हास्यरस प्रधान कविताएँ सुनाकर जो चिकित्सा करने की विधि चली, उसका उद्देश्य भी यही सकारात्मक विचारों के लायक विद्युत् प्रवाह को पैदा करना था।

एक रोगी के पास जब-जब गुलदस्ता रखा जाता उस रोगी के आभामंडल में भारी परिवर्तन गुलाबी रंग के रूप में देखा गया। जिस दिन भूख की शिकायत होती उस दिन अवश्य गुलदस्ता मँगाया जाता, क्योंकि प्रसन्नता से रसायन बदल जाया करते हैं। सिरदर्द का बहुत बड़ा इलाज है-प्रसन्नता। इससे हृदय का दबाव कम होता है और सूक्ष्म शिराओं तथा तंत्रिकाओं का प्राण से स्नान हो जाता है। एक मनोवैज्ञानिक ने बहुत सुंदर सुझाव दिया है, अगर आप किसी कारण से बीमार हैं, उदास और निर्बल हैं तो अन्य व्यवस्था करने के पूर्व प्रसन्नता की व्यवस्था करें ताकि आगे का मार्ग निर्बाध हो सके।

प्रसन्नभाव को देवता कहा गया है, क्योंकि देवता उसी के पास आते हैं जो प्रसन्न होता है। प्रसन्न रहने वाला व्यक्ति कोई भयंकर पाप नहीं कर सकता। जिस गुण के बिना 90 प्रतिशत व्यक्ति असफल रहते हैं वह गुण है प्रसन्न भाव। यह गुण न बाप बेटे को दे सकता है और न बेटा बाप को। यह तो अपनी कमाई का गुण है। प्रसन्नता से मतलब केवल शारीरिक हास्य से नहीं है। भीतरी पवित्रता से उभरने वाला प्रसन्न भाव चाहिए। स्वामी रामतीर्थ की कुटी पर शेर आया-जाया करता था। प्रसन्न व्यक्ति के प्रकम्पन सुखद होते हैं। उनसे मन का भार हल्का होता है। इस कहावत का तात्पर्य यही लगता है कि मैं हँसता हूँ तो सारा संसार हँसता हुआ प्रतीत होता है। यहाँ तक मृत शरीर भी उसे हँसता-खिलता दिखाई देता है, क्योंकि देखने वालों का नजरिया चैतन्य भरा है। पूरा व्यक्ति इससे प्रभावित होता है। अत: इसी गुण से तनाव मुक्त जीवन जीया जा सकता है, इस विश्वास को स्वयं में संजोएं। एडीसन ने बहुत ठीक कहा है-मनुष्य कम से कम इतना बुद्धिमान् न हो जाए कि वह हँसने जैसी महान् खुशी से वंचित रह जाए।

प्रसन्नता व्यक्ति की कार्यक्षमताओं का विकास करती है और वह कर्म के साथ स्फूर्ति और संतुलन बनाए रखती है। थकान मिटाने का एक बहुत बड़ा उपाय है-प्रसन्नता। यह गुण खालीपन को भरकर व्यक्तित्व को तरोताजा बना देता है। योग्यता को बढ़ाता है। उत्तेजना, शोक, बुरे विचार तथा नकारात्मक दृष्टियों से बचाकर सहज शांति से भर सुख की प्रथम भूमिका तक पहुँचा देता है। ●

अहंकार है दुःख का कारण

■ आचार्य सुदर्शन

एक आम मनुष्य का सारा जीवन अनंत आशाओं के भंवरजाल में ही फंसा रहता है। हालांकि यह भी सच है कि यह आशा उसे जीवनीशक्ति तो प्रदान करती ही है, बहुत कुछ करने को भी प्रेरित करती है। इसके सहारे वह अपना काफी समय भी व्यतीत कर लेता है। लेकिन उसका दूसरा पक्ष यह भी है कि आशा और कामना की एकाध कड़ी पार करते ही वह अनंत आशाओं के चक्रव्यूह में फंसता चला जाता है। इसके बाद उसके मन में एक के बाद एक आशाएं बलवती हो उठती हैं और वह उसी की पूर्ति में लगा रहता है।

हर कोई यदि अपने जीवन में क्रियात्मक आशाएं करे तो सफलताएं अवश्य मिलती हैं, लेकिन जब समुद्र की लहरों की तरह मन में आशा की अनंत लहरें उठने लगती हैं तो उसे पूरा करना संभव नहीं होता है। अधिकांश मामलों में ऐसा होता है कि जब एक-दो आशाएं पूर्ण हो जाती हैं तो मनुष्य स्वभावतः अहंकारी हो जाता है। अपने मन में उठते मनोवेग की तरह वह हमेशा सब कुछ पा लेना चाहता है। वह जो भी कल्पना करता है, उसे साकार कर लेना चाहता है। जबकि आशा का प्रवाह अनंत होता है। एक आशा पूरी होती है तो दूसरी सामने आ जाती है और दूसरी के पूर्ण होते ही तीसरी...। इसी प्रकार यह प्रक्रिया निरंतर चलती रहती है। दरअसल, यह मन की निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है।

हर कोई धन कमाना चाहता है। इसके लिए वह उल्टा-पुल्टा प्रयत्न भी करता है। एक बार जब धन की प्राप्ति हो जाती है तो वह और धन प्राप्त करना चाहता है। मनुष्य की चाह का कोई अंत नहीं है। कामना व वासना दो ऐसे मनोवेग हैं जो कभी पूरे नहीं होते। आज तक कोई भी धन की कामना की पूर्ति से कभी संतुष्ट नहीं हुआ। मनुष्य अपना सारा जीवन कामना और वासना की पूर्ति में नष्ट कर देता है और उसे सुख कभी नहीं मिलता। सुख की खोज में भटकते-भटकते अंत में वह दुःख को प्राप्त करके घर लौटता है। आज समाज में इतने दुःखी, अशांत, चिंताग्रस्त और बीमार लोग इसलिए हो रहे हैं कि वे अपनी कामनाओं को पूरा नहीं कर पाए।

पहली सफलता मिलते ही मनुष्य अहंकारी हो जाता है और चाहता है कि जो वह चाहता है उसे हर हालत में मिले। वह अपने अहंकार के पैर तले सबको रौंद देना चाहता है और जब उसे कोई सफलता नहीं मिलती या उसकी कामना

की पूर्ति नहीं होती तो वह आक्रामक हो जाता है, आहत हो जाता है और हीन भावना से ग्रस्त हो जाता है। हीन भावना से ग्रस्त लोग विध्वंसक होते हैं, क्योंकि जब उन्हें कोई वस्तु प्राप्त नहीं होती तो वे उसे नष्ट कर देना चाहते हैं। पशुओं में भी यह प्रवृत्ति देखी गई है कि जब कभी उसे इच्छित वस्तु प्राप्त नहीं होती तो वह आक्रामक हो जाता है। ●

जहां पत्थर पानी में तैरते हैं

■ देवकिशन राजपुरोहित

बाल्मीकि रामायण और रामचरितमानस में सबसे बड़ा चमत्कार यदि कोई है तो वह है रामेश्वर से लंका तक समुद्र पर पत्थरों के पुल का निर्माण। शास्त्र साक्षी है कि नल और नील जैसे वानर की देखरेख में असंख्य वानर बड़े-बड़े पत्थरों पर राम नाम लिखकर समुद्र में फेंकते हैं और वे समुद्र में कागज की तरह तैरने लगते हैं। इस तरह चामत्कारिक ढंग से एक जबर्दस्त पुल का निर्माण हो गया था। लाखों-करोड़ों वर्ष पुरानी इस घटना का मात्र रामायण के अलावा अन्य कोई साक्षी नहीं है। आज के वैज्ञानिक रामायण काल की उस घटना को मजाक व झूठ की सीमा से भी बड़ा झूठ कहते हैं। वे सवाल करते हैं कि यदि राम के नाम से उस युग में पत्थर तैरते थे तो अभी क्यों नहीं तैरते? वैज्ञानिक अपने स्थान पर सही है क्योंकि पत्थर तैरते या तैराते किसी ने अपनी आंखों से नहीं देखा।

राजस्थान संत और वीरों की जगह है। यहां वह सभी कुछ घटता है जो आश्चर्यजनक है। कुछ वर्ष पूर्व विश्वभर में एक साथ गणेश प्रतिमा द्वारा दूध पीने की घटना घटी थी। वह घटना

केवल एक दिन के लिए घटी किन्तु राजस्थान के नागौर जिले में भंवाल नामक गांव में माताजी की प्रस्तर मूर्ति, प्रत्येक आने वाले व्यक्ति से ढाई प्याला शराब पीती हैं। अनेक बुद्धिजीवी, वैज्ञानिक, विचारक, चिंतक और दार्शनिक इस करिश्में को देखकर सोचने पर बाध्य हैं। इससे भी बढ़कर वैज्ञानिकों को चुनौती तब है जब राम नाम के पत्थर पानी पर तैरते दिखाई देते हैं।

राजस्थान के नागौर जिले के रेण नामक गांव में संत दरियाजी महाराज की पीठ रामधाम है। इस रामधाम में मिट्टी से निर्मित पकाई हुई चार ईंटें विद्यमान हैं। ये चार ईंटें आज भी पानी में तैरती हैं और वर्ष में तीन बार सार्वजनिक रूप से तिराई जाती है। एक बड़ी ईंट लगभग ढाई किलो वजन की है, यह लगभग दस इंच लंबी, आठ इंच चौड़ी और तीन इंच मोटी हैं। इस बड़ी ईंट सहित शेष सभी ईंटें तालाब में पानी में ऐसे तैरती हैं जैसे कागज की बनी हों। बताया जाता है कि जुलाहे के घर जनमे और बड़े हुए संत दरियाजी अपनी ननिहाल रेण में आ गए जहां उनका लालन-पालन खत्री समाज में हुआ। दरियाजी ने एक स्वतंत्र रामस्नेही सम्प्रदाय की आधारशिला रखी और वे रामधुन लगाया करते थे।

दरियाजी के बाद उनके उत्तराधिकारी गद्दीनशीन हरखारामजी, रामकरणजी, भगवतदासजी व रामगोपालजी महाराज हुए। ये सभी संत पक्की ईंटों के एक चबूतरे पर स्नान किया करते थे। रामगोपालजी के परलोक गमन के बाद उन ईंटों के चबूतरे को हटाकर स्नान का नया स्थान बनाया गया तब ईंटें तालाब के पानी में फिंकवा दी गईं। आश्चर्य तो तब हुआ जब ईंटें पानी में डूबने की बजाय तैरने लग गईं। उस समय महंत क्षमारामजी ने इन ईंटों को सहेज कर सुरक्षित रखा। अब तीन अवसरों पर इन ईंटों को भक्तों के सम्मुख पानी पर तैराया जाता है। ●

मानव मन की अद्भुत शक्तियां

■ डॉ. श्याम मनोहर व्यास

मनुष्य सृष्टि का श्रेष्ठतम प्राणी है। महाभारत के शांतिपर्व में कहा गया है कि 'नहिं मानुष्यात् श्रेष्ठ तरंहि किंचित्'। अर्थात मानव जीवन से बढ़कर संसार में अन्य कोई जीवन नहीं है।

मानव का मन भगवान की विभूति है। सुख और दु:ख की अनुभूति मन का ही परिणाम है। प्राचीन ऋषि-मुनियों ने मानव-मन पर पर्याप्त खोज की थी। भारतीय दर्शन में मन के तीन स्तर माने गये हैं- चेतन, सुप्त चेतन और अचेतन।

पश्चिमी जगत के प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक फ्रॉयड ने भी मन:शक्ति को स्वीकार किया है। उसने भी मन के तीन स्तरों को स्वीकार किया है- ईगो, सुपर ईगो और इद।

'मैं' की भावना ही 'इगो' कहलाती है। यह भावना जब बलवती होती है तो वह अहंकार का रूप ले लेती है। 'ईगो' के कारण लोग अन्य लोगों से अपने को श्रेष्ठतर मानने लगते हैं जिससे उसके परिजन, मित्रगण उसमें दूरी बना लेते हैं। मनोचिकित्सक कहते हैं कि 'ईगो' के कारण व्यक्ति एकांत प्रिय हो जाता है जिससे वह डिप्रेशन का शिकार हो जाता है।

वेदांत दर्शन इन्द्रिय संपर्क शून्य मन की दो अवस्थाएं मानता है- स्वप्नावस्था और सुषुप्ति अवस्था। स्वप्नावस्था में निद्रा अथवा निद्रा जैसी किसी वृत्ति के कारण सारी इन्द्रियां सोई हुई रहती है और अचेतन मन कार्य करता है। मन की सूक्ष्म वृत्तियों का अनुसंधान वेदांत में अधिक न होकर पातंजलि के योग दर्शन में अधिक हुआ है।

वेदांत के अद्वैत सिद्धांत में भी मन का बड़ा महत्व है। इसके अनुसार जगत मिथ्या है, केवल स्वप्न जगत के तुल्य है। अन्य सभी दर्शनों के समान योग-दर्शन का भी उद्देश्य आत्मा की अपरोक्षानुभूति ही है। मन की शक्ति की सामर्थ्य पर स्वामी विवेकानंद भी एक स्थान पर लिखते हैं- सारा अद्भुत सामर्थ्य मनुष्य के मन में अवस्थित है। प्रत्येक मन दूसरे से संलग्न है और प्रत्येक मन चाहे जहां रहने पर भी संपूर्ण विश्व के व्यापार में प्रत्यक्ष भाग ले रहा है। मन एक अखण्ड वस्तु है और इस अखण्डता के कारण ही हम अपने विचारों को एकदम सीधे बिना किसी माध्यम के आपस में संक्रमित कर सकते हैं। जब दो व्यक्ति संपर्क में आते हैं तब एक दूसरे के मन के प्रभाव परस्पर आदान-प्रदान की प्रक्रिया में प्रवृत्त होते हैं। इस प्रक्रिया के विचार-संक्रमण कहते हैं।

अंग्रेज पर्यटक पॉल ब्रन्टन ने महर्षि रमण से हुई अपनी भेंट का वर्णन करते हुए अपनी

'मैं' की भावना ही 'इगो' कहलाती है। यह भावना जब बलवती होती है तो वह अहंकार का रूप ले लेती है। 'ईगो' के कारण लोग अन्य लोगों से अपने को श्रेष्ठतर मानने लगते हैं जिससे उसके परिजन, मित्रगण उसमें दूरी बना लेते हैं। मनोचिकित्सक कहते हैं कि 'ईगो' के कारण व्यक्ति एकांत प्रिय हो जाता है जिससे वह डिप्रेशन का शिकार हो जाता है।

पुस्तक 'गुप्त भारत की खोज' में लिखा है- महर्षि मेरे मन के अंतरतम को देखते हुए जान पड़ते हैं उनकी रहस्यमयी दृष्टि मेरे विचारों और मेरी कामनाओं को बेध रही है और धीरे-धीरे मेरे अंदर महान परिवर्तन हो रहा है। मुझे ऐसा जान पड़ता है कि महर्षि ने मेरे मन के साथ अपने को जोड़ दिया है। भारतीय ग्रंथों के अनुसार ज्ञान-चक्षु संपन्न गुरु, शक्ति दीक्षा द्वारा शिष्य के मन में अपनी शक्ति पहुंचाकर धर्मभाव जाग्रत कर देता है। छान्दोग्य उपनिषद् के अनुसार स्वप्न को आत्मा और सूक्ष्म शरीर की संधि कहा गया है। उपनिषद् के अनुसार स्वप्न त्रिकालदर्शी भी होते हैं।

प्रो. जे. बी. राइन, जो अमेरिका के प्रसिद्ध परामनोवैज्ञानिक हैं, ने अपने पुस्तक 'मन की पहुंच' में लिखा है ''भविष्य की घटनाओं का आभास देने वाले स्वप्न सिद्ध करते हैं कि मानव में ऐसा तत्व है जो समय और काल से परे है एवं वह अभौतिक या आध्यात्मिक तत्व है।

अमेरिका के राष्ट्रपति लिंकन को एक रात्रि को स्वप्न आया कि वे एक हत्यारे द्वारा मार दिये गये हैं। इस स्वप्न के कुछ दिनों बाद ही उनकी हत्या कर दी गई। मन:शक्ति चमत्कारिक, अगोचर एवं इन्द्रियातीत होती है। मन की कई शक्तियां पूर्वजन्म के संचित संस्कारों के परिणामस्वरूप होती हैं।

इन्द्रियों द्वारा ही मन ब्रह्म-जगत से संपर्क करता है। मस्तिष्क मानव मन का कार्यालय है जिसमें आधुनिक विज्ञान के अनुसार तीन अरब के लगभग कोष काम करते हैं। जिस प्रकार ग्रामोफोन की चूड़ी पर अंकित ध्वनि के संस्कार सर्वदा स्थिर रहते हैं, उसी प्रकार किसी इन्द्रिय द्वारा जो संस्कार किसी कोष पर पड़ता है वह मन में सदा बना रहता है। मन की शक्ति को मनोबल भी कहा जाता है।

आत्मबल से मनोबल बढ़ता है। योगदर्शन में आध्यात्मिक शक्ति प्राप्त करने के लिए पांच यम-अहिंसा, सत्य, ब्रह्मचर्य, अस्तेय और अपरिग्रह तथा पांच नियम शौच, संतोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वर चिंतन माने गये हैं। साधारण भाषा में ये यम-नियम कहलाते हैं। आसन, प्राणायाम एवं प्रेक्षाध्यान द्वारा तन व मन की शक्ति में वृद्धि होती है।

धारणा से चित्त निर्वात दीपक की तरह एकमात्र ध्येय में अवस्थित रहता है। मनोबल बढ़ने पर व्यक्ति कई असाध्य कार्यों में भी सफलता प्राप्त कर सकता है।

योग-दर्शन के अनुसार प्राण, अपान, उदान, समान और त्यान नामक वायुओं में संयम करने से योगी इच्छानुसार कहीं भी गमन कर सकता है। मन की गति असीम व अगाध है। एक क्षण में मन कहीं भी पहुंच सकता है, प्रकाश की गति से भी यह तीव्र गति से गमन करता है। उच्च योग साधना द्वारा योगी रूई की भांति हल्का होकर आकाश में भ्रमण कर सकता है। मनोबल व आत्मबल मानव की सुप्त शक्तियों को सक्रिय करते हैं। संयम और अभ्यास से ही मन पर विजय प्राप्त की जा सकती है। मन की अद्भुत शक्तियों को वश में कर मानव कई महान कार्यों का सृजन कर सकता है। जब तक मन, बुद्धि एवं हृदय एकाकार होकर किसी कार्य के प्रति जागरूक नहीं होते तब तक कार्य में सफलता मिलना कठिन होता है।

मानव मन अतुल शक्तियों का भंडार है। इन शक्तियों का सदुपयोग कर ही व्यक्ति अपने जीवनपथ पर अग्रसर होकर अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है।

-15, पंचवटी, उदयपुर-313004
(राजस्थान)

जीवन की कृतार्थता का रहस्य

■ रूपनारायण काबरा

हम पशु जीवन तो नहीं जी रहे हैं? पशुओं में यद्यपि ज्ञान, विवेक, बुद्धि और अंत:चेतना नहीं है फिर भी कुछ बातों में वे हमसे अच्छे हैं, वे प्रकृति का अनुसरण करते हैं, संग्रह नहीं करते, संग्रह के लिए किसी का गला नहीं घोटते। उनमें अपना हित-अहित सोचने की बुद्धि नहीं है और जो मनुष्य खाने, कमाने, भोग करने में ही लिप्त रहते हैं, ईर्ष्या-द्वेष क्रोध के शिकार होते हैं वे पशुवत ही हैं।

आचार्य श्रीराम शर्मा के अनुसार, ''मानव जीवन अनंत ईश्वरीय शक्तियों का महासागर है। जितनी शक्ति ईश्वर ने उसकी अंतरात्मा में भरी है उसका एक लाखवां अंश भी वह अपने प्रयोग में नहीं लेता।'' सामान्य मनुष्य तो उस भिखारी के समान है जिसके बैठने की जगह के नीचे अपार धन राशि गड़ी पड़ी है जिसका उसे भान ही नहीं है और वह भीख ही मांगता रहता है।

आप वस्तुत: तुच्छ नहीं है, आप तो परमात्मा स्वरूप हैं और महान शक्तियों के स्वामी हैं। अनवरत उत्थान के लिए, कुछ विशेष करने के लिए आपका जन्म हुआ है। आप उन सिद्धियों के स्वामी हैं जो संसार को आश्चर्य में डालने वाली हैं। आप सृष्टि नियंता के चेतन अंश हैं। आप कुछ भी प्राप्त करने में समर्थ हैं यदि अपनी अंतर्निहित शक्तियों को उजागर कर लें, जगा लें। बड़े-बड़े वैज्ञानिक एवं महापुरुष सभी ने अपने अंदर अवस्थित महानशक्ति को उपयोग में लिया है। विद्वानों की मान्यता है कि हम सबके मन के भीतर ऐसी शक्ति है जो हमें कष्ट क्लेश से मुक्त कर सकती है, निराशा को आशा और उत्साह में बदल सकती है। स्वेट मॉर्डन के अनुसार, ''हम मन के हीन विचारों के कारण ही दीन बने रहते हैं। दरिद्रता से अधिक हमारे दरिद्रतापूर्ण विचार हैं जो एक कुत्सित वातावरण की रचना करते हैं।''

सफल, सुखी और समृद्ध जीवन हेतु अपनी सोच को सकारात्मक करना होगा, अध्यात्म की खोज करनी होगी और यह भाव जाग्रत करने होंगे कि 'मैं शरीर नहीं हूं, मैं तो आत्मा हूं और प्रेम, शक्ति, आनंद, आशा, विश्वास, साहस, संतोष व सकारात्मक सोच का सागर हूं। मैं ईर्ष्या, द्वेष, लोभ, क्रोध, घृणा से दूर हूं। ईश्वर मेरे सभी पवित्र कार्यों की सफलता में मेरे साथ सदैव है।'' इन्हीं भावों के साथ बढ़ने वाला किसी भी मंजिल तक पहुंच सकता है और सभी का प्रिय भी बन सकता है। अपने आपको पहचानने का प्रयास ही सफल जीवन की ओर सही कदम है।

शास्त्र कहते हैं, ''उठो, जागो और निज महत्ता को पहचानो, अपने आप का अध्ययन करो। मन से अलग होकर निरन्तर मन के कार्यों को सूक्ष्म रीति से देखो। मन की सीमाहीन गति और उछलकूद ही हमें अस्त-व्यस्त करती है। मन से परे ही चेतना का वास्तविक अस्तित्व प्रारंभ होता है और मन से ऊपर उठने पर ही हमारे व्यक्तित्व में दिव्यता, समग्रता व व्यापकता आती है। हम अज्ञान से भयभीत रहते हैं क्योंकि अज्ञात गूढ़ है, रहस्य हैं, अनावृत है। यह सत्य है कि संसार में वे ही लोग कुछ दे पाये हैं जो साहस करके अज्ञात में घुस जाते हैं और फिर वहां रहस्य खुलेंगे, अनुसंधान होंगे, भ्रम भय भ्रांति मिटेगी। मन तो कमजोर होता है, उसमें स्वार्थ, संकीर्णता एवं भय है, सीमायें व बंधन हैं और विराट, असीम अनंत को आत्मसात करने के लिए आपको अपनी ही अंतरात्मा के चैतन्य भाव में उतरना होगा। हमने जीवन का अंतिम लक्ष्य आत्मबोध ही रखा है पर यह भी सत्य है कि भौतिकता एवं आध्यात्मिकता के समन्वय के बिना स्वस्थ, समृद्ध एवं सुखी संसार की कल्पना स्वप्न ही रहेगी।

डॉ. विद्याभास्कर वाजपेयी के अनुसार, 'मनुष्य को धन-संपत्ति सुख नहीं देते, अपितु अपने विचार और अपने आचरण ही सुख देते हैं। भोग से त्याग की ओर, स्वार्थ से परमार्थ की ओर, शोषण से सेवा की ओर, संकीर्णता से उदारता की ओर, असत्य से सत्य की ओर एवं लघुता से विशालता की ओर बढ़कर बिन्दु से सिन्धु हो जाना है। यही जीवन की कृतार्थता है और यही जीवन का रहस्य है।''

-ए-438, किशोर कुटीर, वैशाली नगर
जयपुर-302021 (राजस्थान)

सबसे बड़ा रुपैया

■ राजेश मिश्र

भले ही हम रात-दिन पैसे के पीछे भागते हैं, पैसे कमाने के लिए हम घर-परिवार, सुख चैन सभी छोड़ देते हैं। लेकिन हमारे दिल में यह धारणा बनी रहती है कि पैसे से सब कुछ खरीदा जा सकता है, लेकिन खुशी नहीं खरीदी जा सकती। आमतौर पर बॉलिवुड की फिल्में इसी सोच पर आधारित होती हैं। वहां सोना नहीं, चांदी नहीं प्यार तो मिला, इसी में खुशी है। यहां पैसे को जहर और नशा (फिल्म: लावारिस) तक कहा गया है। लेकिन एक रिसर्च से पता चला है कि पैसे से खुशी भी खरीदी जा सकती है।

हमारे पास में जिस मात्रा में धन होगा, खुशी के खजाने पर हमारा उतना ही अधिकार होगा। ब्रिटिश मीडिया में इस संबंध में एक रिपोर्ट छपी है। यह रिपोर्ट एक रिसर्च टीम की ओर से करीब 126 देशों से जुटाए आंकड़ों पर आधारित है। इंस्टीट्यूट ऑफ इकनॉमिक अफेयर्स के करीब एक दर्जन रिसर्चरों ने इस पर अध्ययन किया है। उनका कहना है कि खुश रहने के लिए पॉकेट में मनी होना जरूरी है। बिना पैसे के खुशी संभव नहीं है।

रिसर्चरों का कहना है कि इसकी कोई सीमा नहीं है कि कितना पैसा आपको खुशी दे सकता है। ऐसा नहीं है कि एक खास पॉइंट पर जाकर आप कहें कि आपने अपना गोल हासिल कर लिया है। आपके इनकम में जिस रफ्तार से बढ़ोतरी होगी आपकी खुशी के लेवल में उसी गति से इजाफा होगा। दरअसल यह एक बहुत पुरानी बहस है। इसके पक्ष और विपक्ष में लाखों दलीलें दी गई हैं और आगे भी दी जाती रहेंगी।

भविष्य चिंतन का दर्शन

■ ऋषि कुमार शर्मा

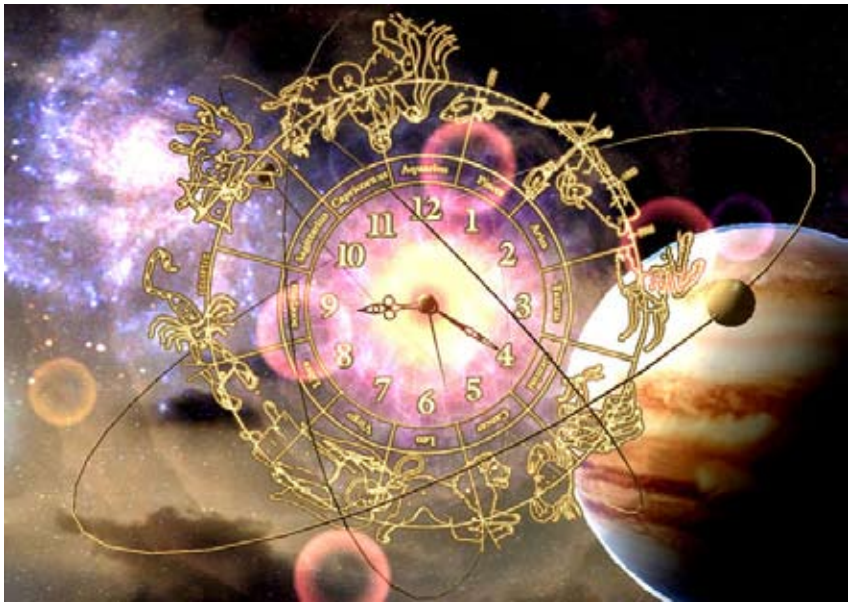

शरीर और आत्मा के संयोग से व्यक्ति की उत्पत्ति है। आत्मा के सकाश में व प्रकृति के गुणों (सतोगुण, रजोगुण, तमोगुण) में गति की तथा गति में कर्म की स्थिति है। आत्मा प्रकृति से सर्वथा परे है, किन्तु उसकी अभिव्यक्ति प्रकृति से उत्पन्न सीमित चित्त में हुई है। वह चित्त के साथ तादात्म्य भाव को प्राप्त होकर प्रकृति के धर्मों से अपने को जोड़े हुए हैं। चित्त परमात्मा की त्रिगुणात्मिका प्रकृति का परिणाम है। वह कोई स्थूल तत्व नहीं है। फिर भी वह सत्, रज व तम का धाता है। सतोगुण प्रकाश, रजोगुण क्रिया और तमोगुण स्थिति में हेतु बनते हैं। चित्त और चेतन के संयोग से अभिव्यक्त हुई चेतना ही बोधात्मिका शक्ति बुद्धि है। बोध से ही 'अहं' स्फुरित होता है। अहं का प्रवाह संकल्प के रूप में 'मन' की शक्ति अवधारित करता है।

मन की गणना ग्यारहवीं इन्द्रिय के रूप में होती है। वेदांत की दृष्टि से 'मन' गुणात्मक तत्व है, किन्तु यह मन बाह्यकरण नहीं वरन् अंत:करण है। अस्तु मेरे विचार से अंत:करण को शुद्ध प्राकृत नहीं समझना चाहिए- वह प्राकृत व अप्राकृत दोनों का ही संयुक्त परिणाम है। यथार्थत: मन, अहं और बुद्धि का तत्वत: विभाजन संभव नहीं है। अत: चेतन के विभाजन संभव नहीं है। अत: चेतन को प्रकाश में वे गतिशील हुए चित्त की विभिन्न अवस्थाएं ही जान पड़ती हैं।

मन की स्थिति- फलस्वरूप इंद्रियों के माध्यम से 'कर्म' एवं 'उपभोग' पर विचार कर लें। सुख और दुख के भोग में पुरुष (आत्मा) ही हेतु कहा गया है। भोग का अभिप्राय अनुभूति से है और 'अनुभूति' ज्ञान का विषय है। 'ज्ञान' चेतन का सहज स्वरूप है। चेतन में ज्ञान और ज्ञान में अनुभूति अर्थात भोग स्वभावत: निहित है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि जैसे गति वायु का धर्म है, प्रकाश तेज का धर्म है, वैसे ही अनुभूति या भोग चेतन का धर्म है। चाहे वह अनुकूल हो या प्रतिकूल, सुखद हो या दुखद, जीव उसकी अनुभूति करेगा ही।

सभी को ज्ञात है कि भोग कर्मों का ही परिणाम होता है। अस्तु जो भी भला या बुरा, वांछनीय अथवा अवांछनीय होता है वह बुद्धि एवं विवेक के माध्यम से छने हुए संकल्प के अनुरूप होना अपेक्षित है। किया हुआ कर्म कमान से छूटे हुए तीर के समान होता है जिस पर तीरंदाज का कोई वश नहीं रह जाता। वह कर्म विधातानुसार फल देता है। फल कर्मानुसार स्वयं ही मिलता रहता है। प्रकृति ही फल में हेतु है, ईश्वर भी कर्म फल में कारण नहीं होता। अस्तु कर्म पर विवेक का नियंत्रण वांछनीय ही नहीं, नितांत आवश्यक है। व्यक्ति स्वभावत: न पापात्मा होता है, न पुण्यात्मा ही होता है। बुद्धि, विवेक तथा संगति के अनुसार जीवन यात्रा की दिशा, दशा एवं मार्ग निश्चित हो सकता है। आवश्यक नहीं है कि हर बुद्धिमान व्यक्ति सतोगुणी भी हो। अनेक बुद्धिमान व्यक्ति चोरी, डाके व अनेक प्रकार के भ्रष्टाचारों में निपुण हो सकते हैं। विवेक के उपयोग तथा तर्क करने की क्षमता इंसान को सुलभ है।

दैव अर्थात प्रारब्ध भी बुद्धि की सीमा से परे है। बुद्धि का प्रयोग केवल चेष्टा में ही किया जाता है। चेष्टा का अभिप्राय है प्राप्त हुए शरीर, इन्द्रियों आदि साधनों की प्रवृत्ति जो सर्वथा बुद्धि पर ही अवलंबित है। कठोपनिषद में एक रूपक द्वारा इस रहस्य को समझाया गया है: शरीर रथ है, बुद्धि सारथी है और आत्मा इस रथ में बैठा हुआ रथी है। इसमें शरीर इन्द्रियां और मन यह सब साधन हैं और आत्मा साधक है। इन समस्त साधनों के प्रयोग की जिम्मेदारी बुद्धिरूपी सारथी के ही अधीन है। सारथी यदि अकुशल और निर्बल है तो वह इन साधनों का उचित प्रयोग नहीं कर पायेगा। रथी को उसके लक्ष्य तक नहीं पहुंचा पायेगा। इसलिए सारथी की कुशलता, योग्यता और सामर्थ्य की महत्ता है इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता।

आयु व्यतीत हो रही है। आयु के साथ-साथ श्वास व शक्ति का भी ह्रास हो ही रहा है जिसे कोई रोक नहीं सकता। अत: इनका स्वयं के नियंत्रण में स्वेच्छानुसार, विवेक-बुद्धि के प्रकाश में, स्वयं की उन्नति के लिए उपयोग क्यों न किया जाए? कहने का अभिप्राय: यह है कि बड़ी सावधानी से ज्ञानेन्द्रियों, मन, बुद्धि, चित्त व अहं से ग्रहण करने योग्य तत्वों को छलकपट रहित होकर ग्रहण करें। अव्यवस्थित जीवन लोक व परलोक की सिद्धि में सहायक नहीं बन सकता। ध्यान रहे कि बाहर का भगवान तो हमारा माना हुआ अर्थात कल्पना का है लेकिन अंदर तो सब कुछ जानने वाला वह स्वयं विराजित है जिसके वर्तमान होने के संबंध में कल्पना की आवश्यकता ही नहीं है।

व्यक्ति अपने कर्मानुसार मनुष्यत्व से देवत्व तथा ईश्वरत्व को प्राप्त करने का अधिकारी हो सकता है। ऐसे कर्म जिनके द्वारा दृष्टि व्यापक हो व हृदय विशाल हो वही आत्मोन्नति के साधन हो सकते हैं। दोष पदार्थों में नहीं वरन् उनके प्रति 'राग' की उपज में है। राग में ही अनर्थ होने-करने का कारण होता है वही विवेक के उपयोग में बाधक तत्व होता है।

हम गृहस्थ हों या संन्यासी, सभी आत्मतुष्टि के लिए ही प्रयत्नशील हैं। देवलोक कर्मलोक नहीं वरन भोगलोक है। मर्त्यलोक ही कर्मलोक है। मोक्ष प्राप्त करने के लिए शुभ-कर्मानुष्ठान अर्थात कर्मयोग से श्रेष्ठ व सुगम कोई साधन नहीं है। धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष यह चार प्राप्तव्य बताये गये हैं। धर्मानुसार अर्थ और काम का सेवन करने वाला व्यक्ति स्वयमेव मोक्ष का अधिकारी हो सकता है।

संपूर्ण कर्मों का ज्ञान में ही अंत होता हैं। यह भी सत्य जान पड़ता है कि ज्ञान के सदृश इस लोक में पवित्र करने वाला दूसरा कोई साधन नहीं है।

-8/234, सैक्टर-3, राजेन्द्रनगर
साहिबाबाद-201005 (उ.प्र.)

बुढ़ापा अभिशाप क्यों ?

■ डॉ. प्रीत अरोड़ा

मानवता की असली पहचान उसका दूसरों के साथ प्रेम, सद्भावना व आत्मीयता से व्यवहार करना है। परन्तु जब बात बुजुर्गों की होती है तो हम अपने इस व्यवहार को क्यों भूल जाते हैं? जो माता-पिता अपना पूरा जीवन हमें सफल बनाने और लालन-पालन करने में समर्पित करते हैं और जब दायित्व निभाने का हमारा समय आता है तो हम अपने दायित्व से मुंह क्यों मोड़ लेते हैं? हम क्यों यह भूल जाते हैं कि अगर आज हम अपने बुजुर्गों के साथ ऐसा अमानवीय व्यवहार कर रहे हैं तो हमारी भावी पीढ़ी हमारे साथ न जाने कैसा व्यवहार करेगी?

आज आपको अपने जीवन का आंखों देखा सच बता रही हूं। हमारे साथ ही पड़ोस में एक परिवार रहता था। परिवार में उनकी पत्नी, दो बेटे-बहुएं पोते-पोतिये व दादी रहती थी। परिवार के मुखिया स्वयं रेलवे में उच्च पद पर आसीन थे और उनके बेटे भी सरकारी कर्मचारी थे। आर्थिक रूप से सुसंपन्न इस परिवार में किसी चीज की कमी न थी। अगर कमी थी तो शायद सिर्फ अच्छी सोच व संस्कारों की। परिवार में जहां प्रत्येक सदस्य ऐशो आराम की जिंदगी व्यतीत कर रहा था वहां दादी की किस्मत में घर के पिछले बरामदे में बना कच्चा-पक्का कमरा ही था। जिसमें दीवारों पर सीलन, बदबू व गदंगी से दम घुटता था। दादी के अपने पति की मृत्यु के बाद उनकी पेंशन से ही अपना गुजर-बसर करती थी परन्तु दादी के नाम जमीन-जायदाद काफी थी। दादी ने मुझे बताया था कि उन्हें इस कोठरी में भी सिर्फ इसलिए रखा गया है क्योंकि सभी की नजर उनकी जायदाद पर है और अगर उनके पास अच्छी खासी जायदाद न होती तो आज वे सड़कों पर या किसी ओल्ड ऐज होम में अपना जीवन बिता रही होती।

दादी सारा दिन चारपाई पर बैठी अपनी अंतिम सांसों के लिए भगवान से दुहाई मांगती रहती थी। चूंकि यह जिंदगी भी किसी नरक भोगने से कम न थी। अक्सर उस घर से दादी की रोने की आवाजें आया करती थी क्योंकि बात-बात पर दादी से मारपीट करना उनके लिए आम बात थी। यहां तक कि दादी को खाने के नाम पर सूखी व मोटी रोटी और पानी जैसी दाल ही नसीब होती थी। परन्तु ममता की प्रतिमूर्ति दादी उसे भी राजभोग समझकर खाती थी। हद तो तब हो गयी जब पैसों के पीछे अंधे हुए इस परिवार ने दादी को खाने में जहर मिलाकर खिला दिया और जब परिवार को सजा मिलने की बारी आई तो उन्होंने पैसों और रूतबे के बलबूते पर अपने इस घिनौने अपराध को भी छुपा लिया।

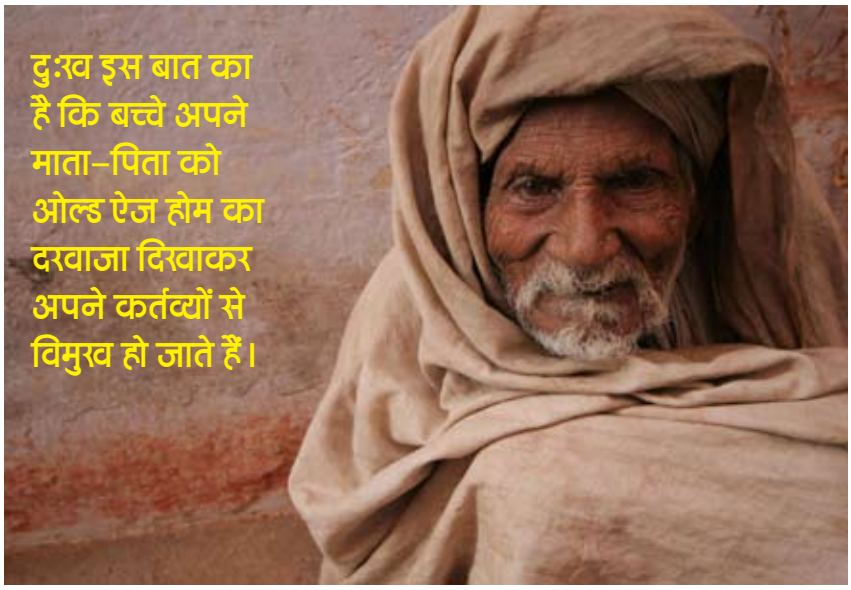

यह कड़वा सच हमारे समाज के अनगिनत घरों की कहानी बनता जा रहा है। आखिरकार पैसा ही अंधकार बनकर रिश्तों की गरिमा को ग्रहण लगा रहा है। दादी के जीवन की यह कड़वी घटना आज भी मेरे दिल को दहला देती है कि कैसे उनके अपने ही पैसों के पीछे हैवान बन गए। उस परिवार में सारी सुख-सुविधाएं होने की बावजूद और अधिक पैसों की लालसा ने ही बूढ़ी मां के प्राणों की आहुति भी दे दी। हमारे समाज में ओल्ड ऐज होम की गिनती भी लगातार बढ़ती जा रही है और सच मानिए कभी आप ओल्ड ऐज होम के दरवाजे पर जाकर खड़े होंगे तो देखेंगे की वहां बूढ़ें माता-पिता की सुनी आंखों में से उबरते हजारों सवाल आपको

दिखाई देंगे जिनका जवाब हमारे पास न होगा कि आखिर किस अपराध की सजा उन्हें दी जा रही है? क्या उनका अपराध यह था कि उन्होंने मां-बाप बनकर अपना दायित्व निभाया? परन्तु दुःख इस बात का है कि बच्चे अपने माता-पिता को ओल्ड ऐज होम का दरवाजा दिखाकर अपने कर्तव्यों से विमुख हो जाते हैं।

हम भारतीय समाज में रहते हुए अक्सर संस्कारों की बात करते हैं और भगवान की पूजा करके अपनी आस्था प्रकट करने की आदर्शवादी बातें सीखते-सिखाते हैं। मैं तो यह कहूंगी कि अगर आप अपने माता-पिता को मौत के घाट धकेलकर भगवान की पूजा करके या संस्कारों की बड़ी-बड़ी बातें करके स्वयं को इंसान मानते हैं तो यह इंसानियत के नाम पर कलंक है क्योंकि हमारे माता-पिता में ही साक्षात् भगवान का रूप निवास करता है। हमारा पहला कर्तव्य बनता है कि हम अपने माता-पिता का सत्कार करें। हमारे माता-पिता के अधिकार अगर हम उन्हें नहीं देंगे तो कौन देगा? इसलिए हमारा, हमारे कानून व हमारे समाज का यह दायित्व है कि वे बुजुर्गों के साथ हो रहे इन अमानवीय व अभद्र व्यवहार को रोकें। हम अपने बुजुर्गों का आदर-सम्मान करते हुए उन्हें परिवार व समाज में वह स्थान दें जिसके वे हकदार हैं। अगर बुजुर्गों के साथ हो रहे ऐसे दुर्व्यवहार का सिलसिला नहीं रुका तो वह दिन दूर नहीं जब इस चक्रव्यूह में फंसने की अगली गिनती हमारी होगी। तो आइए प्रण लें 'बुजुर्गों से करें प्यार यही है समृद्ध सुखी जीवन का आधार।'

-405, गुरुद्वारे के पीछे, दशमेश नगर, खरड़, जिला-मोहाली-140301 (पंजाब)

साधारण से संत तक का सफर

■ संगीता शुक्ला

आधुनिक युग में टेक्नोलॉजी के बढ़ते व्यापार के कारण बच्चे अपनी मूल हिन्दु संस्कृति को भूलकर पाश्चात्य की तरफ झुकते जा रहे हैं। आजकल की युवा पीढ़ी और बच्चों को खास यह संदेश देना चाहती हूं कि जन्म तो सभी का साधारण घर में ही होता है, लेकिन व्यक्ति महान अपने कर्मों के कारण और सच्चे गुरु की प्राप्ति से बनता है। भौतिक सुख तो आज हैं और कल नहीं हैं लेकिन अध्यात्म की प्राप्ति कर लेने से मनुष्य का कल्याण होता है और वह जीवन-मरण के चक्र से मुक्ति पा लेता है। आज तक जितने भी आध्यात्मिक गुरु हुए हैं, सभी का जन्म साधारण घर में ही हुआ था, लेकिन अपनी साधना, दृढ़ निश्चय और सच्चे गुरु की प्राप्ति से उन्हें ईश्वर प्राप्त हुए। इन्हीं संतों में से एक थे स्वामी विवेकानंद। स्वामी विवेकानंद के बचपन का नाम नरेन्द्र था। 12 जनवरी 1863 ई. में कोलकाता के एक संपन्न परिवार में उनका जन्म हुआ था। पिता विश्वनाथ दत्त एक प्रसिद्ध वकील थे। माता भुवनेश्वरी देवी धार्मिक विचारों की महिला थी।

नरेन्द्र की कुशाग्र बुद्धि होने के कारण वे बचपन से ही अध्यापकों के चहेते शिष्य थे। तैराकी, घुड़दौड़, खेल-कूद के अलावा वे वाद-विवाद प्रतियोगिताओं में भी उत्साहपूर्वक भाग लेते थे। नरेन्द्र के हृदय में बचपन से ही ईश्वर दर्शन की तीव्र अभिलाषा थी। अनेक विद्वानों व महापुरुषों से भेंट होते ही वे एक प्रश्न अवश्य पूछते थे क्या आपने ईश्वर को देखा है?

युवा अवस्था में ही पिता का साया सर से उठ जाने के कारण नरेन्द्र का मन अध्यात्म की तरफ बढ़ने लगा, इसी लगन ने उनकी भेंट रामकृष्ण परमहंस से कराई। भेंट होते ही नरेन्द्र ने अपना चिर-परिचित प्रश्न पूछा तो वे बोले- 'हां, क्यों नहीं, मैंने उसको इतने ही स्पष्ट रूप से देखा है, जितना मैं तुझे देख रहा हूं तथा ऐसे ही बातचीत की है जैसे तुझसे कर रहा हूं। ईश्वर का साक्षात्कार तो कोई भी कर सकता है लेकिन परवाह किसे है। यदि कोई ईमानदारी से उसके लिए रोएगा तो अवश्य प्रकट होंगे।

नरेन्द्र के व्यक्तित्व में गुणों व विवेक की आभा देखकर रामकृष्ण परमहंस व उनकी पत्नी माता यशोदा ने उन्हें अपना मानस पुत्र घोषित किया तभी से नरेन्द्र ने सच्चे गुरु को पा लिया। बी.ए. की परीक्षा के बाद उन्होंने वकालत की पढ़ाई आरंभ की। इस बीच उनके पिता चल बसे और घर पर आर्थिक संकट के बादल गहराते चले गये। परिवार के आग्रह पर नरेन्द्र ने गुरु से

याचना की ''मुझे काली के दर्शन करवा दें ताकि मैं परिवार के लिए सहायता मांग सकूं।'' आशा के विपरीत मां काली से साक्षात्कार होते ही नरेन्द्र के यह भाव तिरोहित हो गया और उन्होंने विवेक, वैराग्य, ज्ञान व मुक्ति की ही कामना की। ऐसा तीन बार हुआ परन्तु नरेन्द्र अपने परिवार के लिए धन नहीं मांग पाए। रामकृष्णजी अपने शिष्य की आत्मिक शक्तियों को पहचान चुके थे। गुरु ने नरेन्द्र को अपनी आध्यात्मिक शक्तियां सौंप दी। उन्होंने मरने से पहले नरेन्द्र को अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दिया।

11 सितम्बर 1893 में विदेशों में भारत का परचम लहराने विवेकानंद अमेरिका के शिकागो में धर्म सम्मेलन में भाग लेने गये थे। धर्म पर चर्चा करने के लिए यहां विश्व के कोने-कोने से लोग आये थे, जिसमें विवेकानंद सबसे कम उम्र के वक्ता थे। विवेकानंद ने अपने प्रथम व्याख्यान में ही लोगों को मंत्रमुग्ध कर दिया था। उन्होंने कहा था कि जैसे नदियां अलग-अलग धाराओं में बहती हैं पर अंत में एक ही समुद्र में जा मिलती हैं उसी तरह दुनिया में हर इंसान अलग-अलग धर्मों में पैदा होता है परन्तु अंत में उसे एक ही ईश्वर की शरण में वापस लौटना होता है। इसलिए किसी भी धर्म को कम या ज्यादा मानना एक भूल है क्योंकि सभी धर्म समान हैं।'' इसके बाद उन्होंने इंग्लैंड में अपनी पताका लहराई, वहां के समाचार पत्रों ने उन्हें हिन्दु योगी के नाम से सम्बोधित किया। वहां कि मारग्रेट निवेदिता तो विवेकानंद की शिष्या बन भारत आ गई जिन्हें बाद में विवेकानंद ने 'भगिनी निवेदिता' नाम दिया और वे आजीवन भारत में रही।

अपनी चार वर्षों की यात्रा के उपरांत विवेकानंद ने 1897 ई. में कोलकाता के समीप बेलूर में रामकृष्ण मिशन व मठ की स्थापना की। इसी मठ द्वारा स्वामीजी ने ईसाई धर्म प्रचारकों की उस परम्परा को आगे बढ़ाया जो देशवासियों की सेवा द्वारा उन्हें धर्म परिवर्तन के लिए विवश कर देते थे। उन्होंने देश-विदेश का भ्रमण करते हुए अद्वैतवाद की पताका फहरायी।

संन्यास ग्रहण करने के बाद स्वामीजी ने कई बार अपना नाम बदला क्योंकि वे एक सच्चे परिक्रामक के रूप में भारत की यात्रा करना चाहते थे और एक ही नाम होने पर पहचान लिए जाने का भय बना रहता था। कभी वे सच्चिदानंद बन जाते तो कभी विविदिशानंद। एक बार उनके मित्र ने कहा कि स्वामीजी आपके नाम का अर्थ समझना तो दूर हम तो उसका ठीक से उच्चारण भी नहीं कर पाते, तब स्वामीजी ने हंसकर पूछा तो तुम ही बताओ मैं क्या नाम रखूं। मित्र ने कहा कि आपका नाम विवेकानंद हो तो अच्छा रहेगा। ठीक है आज से मैं स्वामी विवेकानंद कहलाऊंगा। स्वामीजी ने मित्र की इच्छा का मान रखते हुए इसी नाम से जगतख्याति पाई।

4 जुलाई 1902 को स्वामी विवेकानंद अपने कक्ष में बिछे मृगासन पर समाधिस्थ थे। समाधि से उठते ही वे अपने बिस्तर पर लेट गये और यही निद्रा उनकी अंतिम निद्रा थी। यद्यपि वे शरीर से धरती पर विद्यमान नहीं है परन्तु उनके विचार सदा मानवजाति का मार्गदर्शन करते रहेंगे कि आत्मविश्वास से बढ़कर मनुष्य का कोई मित्र नहीं है, आत्मविश्वास ही भावी उन्नति की प्रथम सीढ़ी है। हर धर्म समान रूप से यही संदेश देता है।

**-ऑफिसर क्वार्टर्स नं. 14,
गुजरात भवन, कौटिल्य मार्ग,
चाणक्यपुरी, नई दिल्ली**

महाभारत में स्त्री सबला!

■ डॉ. सुधा उपाध्याय

आज हम स्त्री विमर्श के नारे लगा रहे हैं। महिला सशक्तिकरण पर चर्चा कर रहे हैं। स्त्री की दशा-दुर्दशा पर गोष्ठियां जमा रहे हैं। कभी विचार कर देखा है कि आज की दयनीय देहारूपा स्त्री जो कई भ्रूण हत्याओं से उबरकर यौन शोषण का शिकार होती है। मनचाहा चुनने पर खाप पंचायतों में निरादृत होती है। ऑनर किलिंग की शिकार स्त्री पहले इम्पावर्ड थी या आज, आइए महाभारत कालीन स्त्री पर नजर डालते हैं।

महाभारत का अर्थ है दी ग्रेट इंडिया। बहुत कम लोग यह जानते होंगे कि उस समय भारत की संस्कृति, समय और समाज, स्त्री और पुरुष अपनी-अपनी विशिष्टता के कारण अभूतपूर्व गरिमा से युक्त थे। महाभारत कालीन स्त्रियां सचमुच बाहरी और आंतरिक सभी अनुशासनों में सर्वाधिक सशक्त थी। महाभारत का एक दूसरा अर्थ भी है, वह महायुद्ध का भी प्रतीक है। जिससे यह स्पष्ट है कि यदि समय और समाज में स्त्री जाति को उसका समुचित सम्मान नहीं मिलता और यदि पुरुष का अभिमान रुग्न मानसिकता स्त्री के गुण स्वभाव आचरण पर लादी जाती है तो महायुद्ध होना संभावित है।

स्त्री धर्म (कर्तव्य) की परिचायक है। स्त्री संपूर्ण चर-अचर जीवन जगत की संचालिका शक्ति है। शिव शव है बिना शक्ति के। वह स्वयंसिद्धा है। और स्वावलंबन के क्षेत्र में उसके जैसा कोई नहीं। पुरुष को जन्म देने वाली पालक पोषक स्त्री ईश्वरीय महिमा से मंडित है। जो संपूर्ण मनुष्य जाति की निर्माता है। विधाता का एकमात्र विकल्प स्त्री ही हो सकती है। लगभग 300 संदर्भों में महाभारत कालीन स्त्रियां अपने व्यक्तित्व की हर संभावना पर बड़ी सूक्ष्म दृष्टि से देखी परखी गईं। वे सभी स्त्रियां अपनी चारित्रिक विशिष्टता लिए मनुष्य की प्रकृति और ईश्वर की बनाई सृष्टि में अपना अभूतपूर्व योगदान देने में सफल रहीं।

वे कभी माता, कुल की मर्यादा, मानव संस्थापिका, जीवन की अधिष्ठात्री शक्ति, महाप्रभावशालिनी, अहंकार मिटाने वाली, पुरुष की प्रेरणाशक्ति, योगसिद्धा, चित्रकला निपुणा, पतिव्रता, सुमति, सुनीति, स्वयं पृथ्वीरूपा, गंगा सी वात्सल्यमयी, सत्या, सुभामा, महासती, ब्रह्मचारिणी, त्यागमयी, पूर्ण समर्पिता गुणों से युक्त ये स्त्रियां अपने अधिकार और कर्तव्य दोनों की धनी थीं। इन्हें अपना स्वयंवर रचाने, ज्ञान उपदेश देने से लेकर पुरुष की प्रेरणा शक्ति बनने का अधिकार था। ये स्त्रियां जब भी जिस भूमिका में रहीं, परतंत्र कभी नहीं थीं। इस कर्तव्यपरायण युग में पुत्र पुत्री में कोई भेद नहीं था। कन्या का भी जातिकर्म संस्कार, शिक्षा का अधिकार, दत्तक पुत्री होने का सम्मान समान रूप से मिलता था। ये स्त्रियां, बेटी, बहन पत्नी माता अपने जागरूक परिवेश में अपने अधिकारों के प्रति सचेत थीं। महाभारत युग की यह देन है कि स्त्री केवल देह मात्र नहीं। वह अपने स्वभाव, आचरण और व्यवहार से मनुष्य की भावना मात्र है। ये स्त्रियां सत्य की रक्षा और पालन के लिए कुल की परम्परा और मर्यादा को बनाए रखने के लिए सदैव संघर्षशील रहीं। अपने समर्पण और त्याग से इन्होंने संपूर्ण मानवजाति का विकास किया।

महाभारत काल न केवल स्त्री जाति के सबलीकरण के लिए बल्कि अन्याय, अनर्थ, अनीति के विरोध के लिए भी माना जाना चाहिए। प्रजातंत्र का सबसे सफल युग महाभारत काल ही रहा। सतीत्वनिष्ठ गांधारी को पुत्र दुर्योधन प्यारा था, किन्तु पांडवों का उन्होंने कभी अहित नहीं चाहा। सदैव अन्याय, अनीति और दुराचार का विरोध करती रही। न केवल द्रौपदी का निर्वसन रोका बल्कि इस लज्जाजनक पाप का प्रबल विरोध किया। अठारह दिन चलने वाले महासमर में हर बार यही आशीर्वाद किया...जहां धर्म है न्याय है विजय वहीं होगी...उस युग की स्त्री की उदात्ता, शालीनता और न्यायप्रियता कुंती और द्रौपदी में भी देखी जा सकती है। द्रौपदी के सतीत्व ने धूत क्रीड़ा के अनर्थ को निष्फल किया। अपने महापराक्रमी पतियों को न केवल दासता से मुक्त करवाया बल्कि उन्हें शस्त्र वाहन संपदा राज काज सब कुछ वापस दिलवाया।

धर्मराज कहे जाने वाले युधिष्ठिर की भ्रमित बुद्धि ने न केवल जुआ खेलने का न्योता स्वीकार किया बल्कि दांव की शर्त सुनकर भी अपनी महासती एवं भाइयों के सामर्थ्य को दांव पर लगा दिया। इतिहास गवाह है नारी की क्षमा, करुणा, प्रेम ने महाभारत कालीन पुरुषों को बार-बार बीहड़ संकटों से उबारा। स्त्री जब-जब अपनी कार्यकुशलता से पुरुष के अहम को ठेस पहुंचाती है पुरुष उसे कैद करना चाहता है। जबकि स्त्रियां सदैव पुरुषों की उन्नति यशोवृद्धि में आनंद उत्सव ही मनाती रही हैं।

गीता में श्रीकृष्ण ने नारी को देह नहीं भावनाओं का पुंज माना है। वह कभी अपने सौम्य भावनाओं से पुरुष की कीर्ति बनती है कभी लक्ष्मी, कभी वाणी, कभी स्मृति, कभी बुद्धि यहां तक कि पुरुष की धैर्य शक्ति और क्षमा शक्ति भी। प्रश्न हजार हैं पर उत्तर एक ही...संपूर्ण मानवजाति के इस अर्धांग को आज तक ठीक से नहीं समझा गया। स्थूल भौतिकता सूक्ष्म भावना तक पहुंचने में असमर्थ है। अतः फिर से इतिहास की गवाही जरूरी है।

-बी-3, स्टॉफ क्वार्टर्स
जानकी देवी मेमोरियल कॉलेज
सर गंगाराम अस्पताल मार्ग
ओल्ड राजेन्द्रनगर,
नई दिल्ली-110060

रामायण में अपराध एवं दण्ड की व्यवस्था

■ डॉ. जमनालाल बायती

फादर कामिल बुल्के का नाम आपने अवश्य सुना होगा। ये रामचरितमानस के गहन अध्येता तथा रामायण के विदेशी अधिकारी विद्वान थे। बुल्के के पूर्व भी एक अन्य रामायण प्रेमी ग्रिफिथ अंग्रेजों के शासनकाल में भारत आये थे, वे भी रामायण के ख्यातिप्राप्त पाठक के रूप में जाने जाते हैं। वे नियमित रूप से पूरे ध्यान एवं लगन के साथ रामायण का पाठ करते थे, रामायण के कई अंश उन्हें मौखिक याद थे, वे रामायण का आध्यात्मिक दृष्टि से बड़ा सम्मान करते थे।

ग्रिफिथ ने भारत आकर संस्कृत सीखी तथा इतने प्रभावित हुए कि संस्कृत में ही एम.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। शैक्षिक उपलब्धि उच्चस्तर की होने से उन्हें यही महाविद्यालय में प्राध्यापक के पद पर नियुक्ति मिल गई। समय अपनी गति से बीतता गया और उन्हें उसी महाविद्यालय में प्राचार्य के पद पर कार्य करने का अवसर मिल गया। एक दिन एक छात्र ने अपने सहपाठी छात्र को छोटी-मोटी कहा-सुनी के बाद पीट दिया। पीड़ित छात्र ने प्राचार्य से शिकायत की। प्राचार्य रामचरितमानस के नियमित पाठक थे। प्राचार्य ने अपराधी छात्र को बुलाया। वे अपराधी छात्र से

पूछताछ कर रहे थे। अपराधी छात्र विनय के साथ खामोश था, सुने जा रहा था। छात्र जानता था कि प्राचार्य का रामचरितमानस प्रिय ग्रंथ है, वह प्राचार्य को मानसप्रेमी मानकर दण्ड से बचने का प्रयत्न कर रहा था, वह रामायण से ही प्राचार्य को आश्वस्त करना चाहता था। इसलिए क्षमा प्रार्थना के बजाय रामचरितमानस की एक चौपाई का उच्चारण कर दिया-

जे लरिका कछु अचगरि करहीं।
गुर, पितु, मातु मोद मन भरहीं।।1-127-3

अर्थात बालक यदि चपलता मिला अपराध भी करते हैं तो गुरु, माता, पिता के मन में आनंद ही भरते हैं।

बालक का उत्तर सुनकर, रामायण की चौपाई में सुनकर प्राचार्य ग्रिफिथ प्रसन्न हुए, वे अपराधी को बिना दण्ड दिये छोड़ना भी नहीं चाहते थे। दण्ड न देने मतलब होगा अपराध को प्रश्रय देना, अन्य छात्रों में भी अपराध वृत्ति को प्रोत्साहन देना। प्राचार्य ने भी तत्काल अपराधी छात्र की भाषा में ही रामायण की चौपाई सुनाकर दण्ड की व्यवस्था कर दी-

जो नहि दण्ड करौं खल तौरा।
भ्रष्ट होई श्रुतिमारग मौरा।। 7-106-7

अर्थात अपराधी बालक! यदि मैं तुझे दण्ड न दूं तो मेरा वेद मार्ग ही भ्रष्ट हो जायेगा। चौपाई सुनाने के साथ ही ग्रिफिथ बोले- तुमने अपना अपराध स्वीकार कर लिया है पर इससे अपराध की गंभीरता कम नहीं होती। अपराध, अपराध ही है, वह कम नहीं हो जाता, अपराध महत्वहीन नहीं हो जाता। तुमने अपराध स्वीकार करने के लिए रामायण की चौपाई उद्धरित की है। इससे स्पष्ट है कि रामायण में श्रद्धा रखने के साथ तुम दण्ड व्यवस्था का समर्थन करते हो और तुम दण्ड सहर्ष स्वीकार करोगे। दण्ड स्वरूप तुम दस रुपये कार्यालय में जमा कराकर रसीद प्राप्त कर लो तथा छात्र से माफी मांगो।

-बी-186, आर. के. कॉलोनी
भीलवाड़ा-311001 (राजस्थान)

खुशबू और महक का अहसास

■ पल्लवी सक्सेना

महक या खुशबू एक ऐसा शब्द या एक ऐसा एहसास है जो मन मंदिर के अंदर से गुजरता हुआ अंतरात्मा में विलीन होता हुआ-सा महसूस होता है। लगभग हर व्यक्ति को खुशबू बहुत पसंद है फिर चाहे वो किसी इत्र की खुशबू हो, मंदिर में जलने वाली किसी अगरबत्ती/धूप की खुशबू हो, मज़ार पर जलने वाले लोबान की खुशबू, चाहे वह हवन सामग्री की ही खुशबू क्यूं न हो, सभी को महका-महका-सा माहौल बहुत पसंद आता है। भीनी-भीनी-सी दूर से आती सुगंध में जैसे मन को एक असीम शांति का आभास होता है। जहां तक खुशबू/महक/सुगंध की बात की जाए, जीवन में कुछ खुशबू ऐसी होती हैं, जिससे जीवन में किसी-न-किसी याद से जुड़ा नाता जरूर मिलेगा।

जैसे मेरा बचपन जुड़ा है चंदन और मोगरे की महक से तो कॉलेज की जिंदगी और यादें जुड़ी है। विकी टर्मरिक और पॉन्डस टेल्कम पाउडर की खुशबू से जिसमें कहीं हल्की-सी महक हिमानी टेल्कम पाउडर की भी शामिल है जिसे याद करते ही मेरा मन सीधे परीक्षा हॉल में जाता है। जहां आस-पास बैठे सभी लोगों के पास से उन दिनों यह गिनी-चुनी खुशबुओं की महक ही आया करती थी। शायद आज भी मेरे घर में असली चंदन न सही मगर विको टर्मरिक क्रीम जरूर मिल जायेगा आपको, मगर किसी सौंदर्य प्रसाधन की दृष्टि से नहीं, बल्कि बस कुछ महकी हुई सी यादों को याद करने के लिए और एक दवा के रूप में जो जलने, कटने या छिलने पर एक एंटीसेप्टिक के रूप में काम करती है। वैसे सौंदर्य प्रसाधान की दृष्टि से चंदन से अच्छी पूरे विश्व में कोई सुगंध नहीं है और चूंकि यह मस्तिष्क को ठंडा रखता है, इसलिए औषधि के रूप में भी मस्तिष्क को ठंडा रखने वाली इससे अच्छी कोई बूटी नहीं, किन्तु यदि आप इसे एक सौंदर्य बढ़ाने वाले प्रसाधन के रूप में प्रयोग करना चाहते हैं तो याद रखें शुष्क अर्थात रूखी सूखी त्वचा वाले व्यक्ति कभी इसके पाउडर का सीधा प्रयोग अपनी त्वचा पर ना करें। इसे किसी नमी युक्त पदार्थ के साथ ही प्रयोग करें।

दुनिया में सबसे ज्यादा पसंद किया जाने वाला फूल गुलाब का है जिसे लोग अपनी रोजमर्रा की जिंदगी में नहाने की पानी से लेकर गुलकंद के रूप में खाने और गुलाबी कपड़ों और प्रसाधनों को इस्तेमाल कर गुलाब जैसा दिखने और महकने की ख्वाइश भी रखते हैं। इसलिए ऐसा माना जाता है कि पूरी दुनिया में सभी लड़कियों को केवल गुलाब का ही फूल सबसे ज्यादा पसंद आता है। मगर इन सब खुशबूओं से परे भी इंसान के जीवन में कुछ एक खुशबू ऐसे भी होती हैं, जिनको कोई नाम नहीं दिया जा सकता, बस केवल महसूस किया जा सकता है। जैसे प्यार की खुशबू जो आपके अंतस में उसकी पहचान बन के बस जाती है, जिसे सिर्फ आप महसूस कर सकते हैं और कोई नहीं।

-द्वारा डॉ. एस. के. सक्सेना
27/1, गीतांजली काम्प्लैक्स,
गेट नं. 3, हजेला हॉस्पिटल के पास,
भोपाल (मध्य प्रदेश)

नीलकंठ

❋ मुरलीधर वैष्णव

सभी चखना चाहते हैं अमृत यहां
विष को कोई नहीं
नाग भी चखता नहीं है विष
पीकर दूध का कटोरा
बना लेता है वह विष
अपने भीतर

डरते भी हैं हम विष से
तभी तो भयभीत हो हमने
सरका दिया विषघट तुम्हारी ओर
और पिला कर उसे तुम्हें
हम समझे
मानो कर लिया जगत को विषमुक्त
मुस्करा उठे थे तब तुम
हमारी नासमझी पर
और कहा था हमसे
दे दो मुझे इस विषघट के साथ
तुम्हारा मन भी
मन जिसमें फैला है विष
समुद्राकार में
जिसमें बनता है वह
उफनता है वह
तेज़ाब की तरह
सब कुछ जलाकर ऊंघता है वह
शमशान की तरह

चाहते थे तुम हमारा विष पीकर
दे देना अपना शिवत्व हमें
दे देते जो हम तब
अपना मन भी तुम्हें
तो नहीं बनते नित नये विषघट
हमारे भीतर
मन जो न होता
तो होता ध्यान
होता जो ध्यान
तो फिर शिवत्व होता
साक्षीत्व होता
फिर शायद विष न होता

–गोकुल, ए-77, रामेश्वर नगर
बासनी प्रथम फेज
जोधपुर-342005 (राजस्थान)

बेटी

❋ प्रो. शरद नारायण खरे

सूखे में बरसात है बेटी,
पूनम वाली रात है बेटी।
माता-पिता को, परम पिता की,
सचमुच में सौगात है बेटी।
गहन अंधेरा बिखरा हो तो,
उजला इक प्रभात है बेटी।
पत्नी, बहना और प्रेयसी,
देवरूप है, मात है बेटी।
जब मायूसी का डेरा हो,
तब सुधरे हालात है बेटी।
यज्ञ, हवन, पूजन जैसी है,
केले का तो पात है बेटी।
'शरद' मिटाये कटुता को जो,
शहद घोलती बात है बेटी।

–विभागाध्यक्ष इतिहास
शासकीय महिला महाविद्यालय
मंडला-481661 (म.प्र.)

हाइकू रचना

❋ डॉ. शकुन्तला तंवर

चैत चांदनी रेशमी ओढ़नी-सी धरा के वक्ष।
चैत का चांद नभ सागर बीच तैरती नौका।
चैत्र महीना धूल भरी हवाएं पात सहमे।
गर्द गुबार कर रही प्रहार सांसों का भार।
चैत्र टहनी लदी फूलों के भार नवयुवती।
पंखुरी बन बिखर गया फूल जीवन शूल।
नवल आम नव सम्वत्सर उल्लास लिए।
चैत का मास वर्ष कैलेण्डर का पहला पृष्ठ।
चैत की बेला झूम उठता नीम हंसी दिशाएं।
प्रेम का रंग चटक पलाश सा यौवन दीप्त।
प्रेम चुनरी ओढ़ ली-जब रंग ही रंग।
प्रेम ने नापी मीलों की दूरियां मजबूरी।
प्रेम की पाती तारों भरी रात में आंसू से भीगी।
प्रेमी का दिल जीवन की किताब मौन भाषा में।
संकत भाषा पलकों को झुकना उठना फिर।

-33/52, मधुवन, रेम्बल रोड
अजमेर (राजस्थान)

जागो भारत जागो

❋ शम्भु चौधरी

जागो भारत जागो!
इंकलाब नया लाओ भारत।
जागो भारत जागो!
बन के पुजारी लोकतंत्र ये
लूट रहे मंदिर सब आज,
मिटा नहीं अस्तित्व देश का
नंगे बन फिरते सब साथ।
अंधी-लंगड़ी-लूली हो गयी
देश की संसद, गूंगी हो गयी,
भारत का स्वाभिमान खो गया,
संसद का ईमान खो गया।
सोने की चिड़ियां भूखी-प्यासी,
दाने-दाने को तरस है खाती,
सांप्रदायिकता की आड़ में अब
तू-तू...मैं-मैं गीत ये गाती।
इनके इरादे नेक नहीं अब,
लगा मुखौटे एक हो गये,
सत्ता के मद में
सबके सब अंधे जो हो गये।
खेत बेच दे, देश बेच दे,
सत्ता की जागीर बेच दे,
मां का आंचल, दूध बेच दे,
बलदानी इतिहास बेच दे,
भगत सिंह का नाम बेच दे,
और बेच दे भारत को।
अब अपनी ताकत पहचानो,
वोटों की ताकत को जानो,
घर-घर अलख जगा दो आज,
भ्रष्टाचार मिटा दो आज।

-एफ.डी.-453/2, साल्ट लेक सिटी
कोलकाता-700106 (प.बं)

ग़ज़ल

❋ विज्ञान व्रत

उसका चेहरा दरपन है
यानी अब तक बचपन है
उससे मिलने का मन है
देखो तो क्या उलझन है
उड़ने को एक अम्बर हो
आज पखेरू-सा मन है
उससे अनबन थी जब थी
अब तो खुद से अनबन है
पत्ता-भर भी छांव नहीं
कितना सूना आंगन है।

-एन-138, सेक्टर-25
नोएडा-201301 (उ.प्र.)

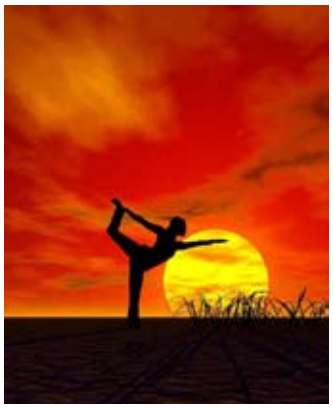

आंगन की तुलसी

❋ गणेश मुनि शास्त्री

जन्म की आश
जीवन का उल्लास
किसलय सा तन,
नन्हीं आंखों में तैरते
सुनहरे स्वप्न
लबों पर मधुरम गीत
मन में बसाये
अनजाना मीत।
डोलती-सी
कभी इधर
कभी उधर,
जैसे मचलती हो
सागर में शांत लहर।
ना खुशी ना गम,
प्रकृति की रचना
कितनी अद्‌भुत
कितनी अनुपम।
बाहर आने का भाव लिये
कुछ कर गुजरने का चाव लिये
तरसती है पाने को
मां का आंचल
एक अदद सोन परी।
तभी सहसा अंग-अंग पर
पड़ता है कृत्रिम प्रकाश,
होता है उसे
झुलसने का एहसास।
ममता की मूरत मां
बन जाती है हैवान,
तार-तार हो जाते हैं
उसके अरमान
मूक जुबां की श्वासें
अंदर ही अंदर खो जाती है,
हा! आंगन की तुलसी
अगली सुबह ही
किसी झील या गंदे नाले में
तैरती नजर आती है।

–श्री अमर जैन साहित्य संस्थान
गणेश विहार, सैक्टर-11
उदयपुर-313002 (राजस्थान)

डालो ऐसी परंपराएं

❋ डॉ. माया सिंह 'माया'

अपने हृदय की पीड़ाएं
जग को कैसे आज बताएं
लगता है घर मरघट जैसा
टूट रहीं सब मर्यादाएं
क्रूर हुए उपवन के माली
खिलती नहीं नवल कलिकाएं
जो कुछ बीत रही है मुझ पर
प्रियतम कैसे तुम्हें बताएं
मानव हित जिसमें संभव हो
डालों ऐसी परम्पराएं
रामचरण रज जिन्हें मिली वो
पूज्यनीय हो गईं शिलाएं
मुझको छलती रहीं हमेशा
'माया' मन की अभिलाषाएं।

-1014, राजेन्द्र नगर, बैंक कॉलोनी
उरई-285001, जिला-जालौन
(उ.प्र.)

गृहस्थ

❋ काशी प्रसाद खेरिया

गृहस्थी के व्यूह में
चाव से प्रवेश किया
रस-लोलूप भ्रमरों से
केश हुए
दूरगामी हंसो जैसे
समय ने दिखाया
स्वत्व की अवहेलना का
मुक्ति मार्ग
स्वयं स्वीकृति निर्वासन

समझाता हुआ
स्वयं को चला गया
अपने ही नीड़ के
अंधेरे एकांत में
पुत्र-पति-पिता-पितामह
मैं स्वयं हूं, रे!
निखिल अखिल का
समस्त का- समग्र का
नाम विहीन गृहस्थ
एक अभिनेता-सा
फिर भी निभा रहा
कई भूमिकाएं एक साथ।

-5, नेशनल लाइब्रेरी एवेन्यू
कोलकाता-700027
(पश्चिम बंगाल)

वन्य प्राणियों के बचाव में

❋ डॉ. जगदीशचंद्र शर्मा

वन्य प्राणियों के बचाव में
हम अड़ जाएं! कदम बढ़ाएं!
वन्य जंतु हैं सदियों से ही
मित्र हमारे,
कई लुप्त हो गए,
छिने जा चुके सहारे।
वन्य-जंतुओं के विकास को
सफल बनाएं।
वन काटे जा रहे
धड़ल्ले से दुनिया में,
हर बच्चा वन के विनाश को
रोके-थामे।
सघन बने वन, प्राणी पनपें,
यह समझाएं।
पेड़ काट कर, लोग उन्हें
दुत्कार न पाएं,
उन्हें शिकारी या कोई भी
मार न पाएं।
जीने का अधिकार
उन्हें हम पुनः दिलाएं।
पेड़ लगाएं मिलजुल कर
ज्यादा से ज्यादा,
सदा निभाएं हरियाली
वर्धन का वादा।
वन्य जीवन निर्भयता से फिर
समय बिताएं।

–पो. गिलूंड, राजसमंद-313207
(राजस्थान)

रास्ता अभी बाकी है

❋ कुमुदिनी रेनू सिरोया

पलकों पर ठहरी हुई बूंदों में दर्द भरा अफसाना था
कैसे रुकते अश्क अधर में उनको तो बह जाना था
सामने बैठे थे वो यूं कि लब भी मेरे खामोश हुए
पर इन आंखों को तो सारा हाले दिल कह जाना था।
अभी तो पहली पगडण्डी है रास्ता अभी बाकी है
अभी अकेले हम सफर में कारवां अभी बाकी है
हार के बाजी इन राहों पर हुनर जीत का सीखा है
जीते चाहे दुनिया भी दिल जीतना अभी बाकी है।
किसी को मिटाकर खुद को बनाया तो क्या गजब किया
किसी को गिराकर खुद को उठाया तो क्या गजब किया
महानता वो है कि किसी के आंसू खुद में समेट ले
किसी को रुलाकर खुद को हंसाया तो क्या गज़ब किया..
बंद बोतलों मे मय खाने बोलते हैं
धीरे-धीरे दोझख के दरवाजे खोलते हैं,
मदहोशी में लुटती है दुनिया किसी की
और खुशी में ज़हर पैमाने घोलते हैं।

–सिरोया मेडिकल स्टोर
213/12, अशोक नगर, मावा मिष्टान्न के पीछे
उदयपुर-313001 (राजस्थान)

रावण दहन से पवित्र होने का भ्रम

■ गोवर्धनलाल पुरोहित

हमारे यहां रावण की कपटी व अहंकारी के रूप में जितनी मान्यता है, संसार के किसी व्यक्ति के प्रति उस प्रकार की भावना नहीं है। उसका सबसे बड़ा दोष यह था कि उसने भिक्षुक बनकर छल-कपट से सीता का अपहरण किया। उसका यह कार्य न तो वीरोचित था और न ही धर्म सम्मत। इसीलिए उसे सीता ने अशोक वाटिका में फटकारा था, 'सठ-सूने हरी आनहि मोहि, अधम निर्लज्ज, लाज न तोही।

हमारे यहां आसोज शुक्ल दशमी को रावण का पुतला जलाने की परम्परा सनातन काल से चली आ रही है। इसे हम बुराई पर अच्छाई की विजय कहते हैं, क्योंकि अच्छाई एवं सदाचार की मूर्ति श्रीराम ने बुराई के प्रतीक रावण पर इसी दिन विजय प्राप्त की थी।

भावावेश में अपराध होना स्वाभाविक हैं परन्तु बंधु- बांधवों व अपनी स्त्री के समझाने पर भी उसने अपनी भूल स्वीकार न की। इससे लोग रावण से घृणा करने लगे और प्रतीक रूप में उसका पुतला जलाने लगे। उसे बुराई का प्रतीक मानकर ही उसका पुतला जलाया जाता है। लेकिन क्या इस परिधि में उसके जैसे आचरण करने वाले दूसरे लोग नहीं आते? इस रावण की पहचान तो उसकी शारीरिक बनावट के कारण सरल थी। उसके पिता पौलस्त्य ऋषि शुद्ध आर्य थे। माता दैत्यराज की पुत्री थी। वे सभी तो काल के गाल में समा गए। पर आज भी प्रतिदिन अपहरण कर फिरौती लेने वाले धन के लालची, लोगों का वध कर रहे हैं। क्या आज भी यह कार्य रावण ही आकर कर रहा है? उसे तो शरीर छोड़े हजारों वर्ष हो गए।

रावण का पुतला जलाने मात्र से ही हम बुराइयों को अंत कर पाते, तो भारत की आज यह दुर्दशा न होती। हमारे भीतर प्रवेश कर गए रावण को जलाने में ही दशहरा मनाने की सार्थकता है। सच तो यह है कि दशहरे पर रावण का पुतला जलाकर हम सिर्फ अपना मनोरंजन कर रहे हैं।

आज रावण के समान आचरण करने वालों को हमारा समाज दंड क्यों नहीं देता? आज भ्रष्टाचार तथा असत्य भाषण जैसे दुर्गुण व्यावहारिकता या दुनियादारी की श्रेणी में रखे जा रहे हैं ऐसा क्यों हो रहा है, क्या इस पर विचार करना आवश्यक नहीं है।

आदमी के स्वार्थीपन से ही रावण की भूमिका तैयार होती है और इससे अंकुरित पौधे को विकसित होने का अवसर मिलता है, मनुष्य के अहंकार से। आज यह मनुष्य की विवशता बनती जा रही है। यह विवशता ही रावण की जननी है। इस समय की समाज व्यवस्था ने तो रावण को ही जन्म दिया है।

राजा जनक के धनुष यज्ञ में रावण स्वयं उपस्थित था। उसने भी धनुष तोड़ने का प्रयास किया ताकि वह विधिवत सीताजी को प्राप्त करे, परन्तु इसमें उसे सफलता न मिली। वहां राम को सफलता मिली। ऐसे समय में रावण राम की सफलता से तनिक भी तिलमिलाया नहीं। वह चुपचाप वहां से प्रस्थान कर गया। हां, सीता का लावण्य उसके मन मस्तिष्क में अंकित हो गया। इसलिए उसने सीता का अपहरण किया। परन्तु उसकी स्वीकृति के बिना उसे स्पर्श तक न किया। यह उसकी शालीनता ही थी। परन्तु आज तो जबरन बलात्कार की खबरें आती हैं।

आज हमारे ही बीच बहुत से लोग उससे भी घृणित कार्य करते हैं, पर हम सब उनका बचाव करते हैं, क्योंकि वे हमारे अपने संबंधी या मित्र या क्लाइंट होते हैं। इतने पर भी हम प्रतिवर्ष रावण का पुतला जलाते हैं। क्या उसका पुतला जलाने से हम पवित्र हो जायेंगे?

आज प्रत्येक मनुष्य में वह रावण जीवित है। यह हमारा चारित्रिक दोष है, हम उस दोष को जलाएं न कि रावण के बुत को। ऐसा करके तो हम उसे महिमा मंडित कर रहे है।

रावण का पुतला जलाने मात्र से ही हम बुराइयों को अंत कर पाते, तो भारत की आज यह दुर्दशा न होती। हमारे भीतर प्रवेश कर गए रावण को जलाने में ही दशहरा मनाने की सार्थकता है। कड़वा सच तो यह है कि दशहरे पर रावण का पुतला जलाकर हम सिर्फ अपना मनोरंजन कर रहे हैं। रावण का पुतला जलाना एक औपचारिकता मात्र रह गई है। नगर निगम व पंचायतें करोड़ों रुपये का धुआं उड़ा रही हैं। इसके बदले हम यह संकल्प लें कि हम सुधरें व दूसरों को सुधारें, तभी दशहरा मनाने की सार्थकता है। ●

सबसे असरदार दवा है पैदल चलना

■ हिप्पोक्रेट्स

हिप्पोक्रेट्स को मॉर्डन मेडिकल सिस्टम का पितामह माना जाता है। उनका जन्म यूनान में 460 ई.पू. में हुआ। उन्हें मेडिसिन में क्रांति करने और मेडिकल को एक प्रफेशन के रूप में स्थापित करने के लिए जाना जाता है। इससे पहले माना जाता था कि बीमारियां कुदरत की देन हैं। उन्होंने इसका विरोध किया और बताया कि बीमारियां शरीर में गड़बड़ी की वजह से होती है। 370 ई.पू. में उनका देहांत हो गया।

● दो चीजों की आदत डालो- पहली, मदद करने की और दूसरी, कम-से-कम किसी को नुकसान न पहुंचाने की।

● कुछ नहीं करना भी अच्छा इलाज या उपाय है।

● किसी भी चीज की तारीफ बहुत लोग करते हैं, लेकिन उसके बारे में जानते कम ही हैं।

● आदमी को किस तरह की बीमारी होती है, इसके बजाय यह जानना जरूरी है कि किस तरह के आदमी को बीमारी होती है।

● ठीक होना वक्त पर निर्भर करता है, लेकिन कुछ हद तक मौके पर निर्भर करता है।

● किसी भी चीज का बहुलता में होना कुदरत के खिलाफ है।

● दो तथ्यात्मक चीजें हैं- साइंस और राय। पहली से जानकारी मिलती है और दूसरी से नासमझी।

● जहां चिकित्सा से प्यार होता है, वहीं पर मानवता से भी प्यार होता है।

● भाषा की सबसे बड़ी खासियत उसका स्पष्ट होना है। अनजान शब्दों के इस्तेमाल से ज्यादा कोई और चीज इसे नुकसान नहीं पहुंचा सकती।

● जिंदगी छोटी है, कला बड़ी, मौका भागनेवाला, अनुभव सिखानेवाला।

● डॉक्टर अगर अच्छा नहीं कर सकता, तो उसे बुरा करने से रोका जाना चाहिए।

● प्रार्थना करना अच्छा है, लेकिन भगवान को बुलाने के लिए खुद हाथ आगे बढ़ाना चाहिए।

● किसी भी समझदार को मानना चाहिए कि सेहत सबसे बड़ी नेमत है।

सबमें है प्रभु की ज्योति का निवास

■ संत राजिंदर सिंहजी

बहुत साल पहले एक संगीत मंडली गांव-गांव, शहर-शहर जाकर लोगों के सामने अपनी कला का प्रदर्शन करती थी। इसी तरह उनकी जीविका चलती थी। एक दिन ऐसा हुआ कि उनके आयोजन में बहुत ही कम श्रोता आए। उस दिन मौसम खराब था और बाहर तेज बारिश हो रही थी।

उन सबने मिलकर इस पर विचार किया। एक ने कहा, मुझे तो ऐसा नहीं लगता कि आज हमें अपना प्रदर्शन करना चाहिए। दूसरे ने देखा कि हां, ऐसी बारिश में कौन हमारा शो देखने आएगा।

तीसरा बोला, बिल्कुल सही, अच्छा यही है कि हम आज का शो रद्द कर दें और लोगों को उनके पैसे लौटा दें। पहले ने फिर कहा, तुम ठीक कहते हो। कोई भी यह नहीं चाहेगा कि हम इतने कम लोगों के सामने अपना प्रदर्शन करें।

दूसरे ने कहा, कोई हमसे यह आशा कैसे कर सकता है कि इन थोड़े-से लोगों के समक्ष हम अपना सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करेंगे।

चौथा संगीतज्ञ चुपचाप उन सबकी बातें सुन रहा था। उन्होंने उससे पूछा, तुम क्या कहते हो?

उसने कहा, मैं जानता हूं कि तुम निराश हो। मैं खुद भी निराश हूं। परन्तु जो दो-चार लोग आज हमारा शो देखने आ चुके हैं, उनके प्रति भी तो हमारा कुछ दायित्व है। हम अपना शो करेंगे और सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन देंगे। जो लोग हमें सुनने पहुंचे हैं, यह उनका दोष नहीं कि दूसरे लोग क्यों नहीं आए। उन्हें हम जो दे सकते हैं, उससे कम देकर हम उनका निरादर न करें।

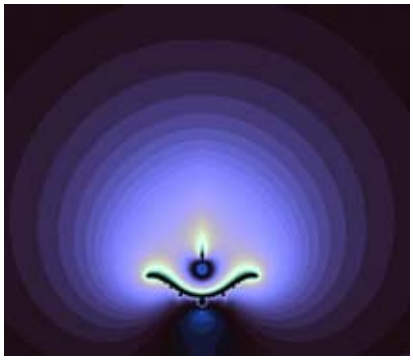

हममें से हर एक के भीतर एक राजा है, हर एक व्यक्ति महत्वपूर्ण है और हम सबके भीतर आत्मा है जो कि परमात्मा का अंश है। जब हम इस दृष्टि से अपने सभी कार्य करते हैं कि हमें हर व्यक्ति को अपना सर्वश्रेष्ठ देना है, तब हम हर एक के अंदर बैठे परमात्मा को सम्मान देते हैं।

उसकी बातें सुनकर बाकी संगीतकार उत्साह से भर उठे और शो की तैयारी में जुट गए। उस रात का प्रदर्शन उनके जीवन का सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शनों में से एक था।

शो समाप्त होने पर जब सब लोग जा चुके तो चौथे संगीतकार ने साथी कलाकारों को एक पर्चा दिखाया, जो कोई श्रोता उसके हाथ में थमा गया था। वह पढ़ा गया। उसमें लिखा था, आज के बेहतरीन प्रदर्शन के लिए धन्यवाद। नीचे उस देश के राजा के हस्ताक्षर थे।

हममें से हर एक के भीतर एक राजा है, हर एक व्यक्ति महत्वपूर्ण है और हम सबके भीतर आत्मा है जो कि परमात्मा का अंश है। जब हम इस दृष्टि से अपने सभी कार्य करते हैं कि हमें हर व्यक्ति को अपना सर्वश्रेष्ठ देना है, तब हम हर एक के अंदर बैठे परमात्मा को सम्मान देते हैं।

नम्रता एक ऐसा दुर्लभ गुण है, जिसे हमें अपने जीवन में धारण करना है। नम्रता का अर्थ ऐसे भाव से जीना है कि हम सब एक ही परमात्मा की संतान हैं। जब हमें यह अहसास होता है कि प्रभु की नजरों में सब एक समान हैं, तो दूसरों के प्रति हमारा व्यवहार नम्र हो जाता है। जब हमारा अहंकार खत्म हो जाता है तो हमारा घमंड और गर्व मिट जाता है। तब हम किसी को पीड़ा नहीं पहुंचाते। हम महसूस करते हैं कि प्रभु की दया से हमें कुछ उपहार मिले हैं और जो पदार्थ हमें दूसरों से अलग करते हैं, वे भी प्रभु के दिए उपहार हैं।

अपने भीतर प्रभु का प्रेम अनुभव करने से हमारे अंदर नम्रता आती है। तब हर चीज में हमें प्रभु का हाथ नजर आता है। हम देखते हैं कि करनहार तो प्रभु हैं। इस तरह की आत्मिक नम्रता धारण करने से, धन, मान, प्रतिष्ठा, ज्ञान और सत्ता का अहंकार हमें सताता नहीं है।

कहा जाता है कि जहां प्रेम है, वहां नम्रता है। हम जिनसे प्यार करते हैं, उन पर अपना रोब नहीं डालते और न ही उन पर क्रोध करते हैं। हमें उन लोगों के प्रति भी इसी तरह का व्यवहार करना चाहिए, जिनसे हम अपरिचित हैं। यह भी कहा जाता है कि जहां प्यार है, वहां निःस्वार्थ सेवा का भाव होता है। हम जिनसे प्रेम करते हैं, उनकी सहायता करते हैं। क्योंकि सबमें प्रभु की ज्योति निवास करती है। ●

मधुमेह पर नियंत्रण पाएं

मधुमेह इंसुलिन की कमी के कारण उत्पन्न शारीरिक स्थिति है। हमारे शरीर में पाचन संस्थान के कुछ नीचे बायीं ओर एक ग्रंथि होती है, जिसे पेंक्रियाज ग्रंथि कहते हैं। इसी ग्रंथि के कुछ विशेष कोष इंसुलिन नामक स्राव उत्पन्न करते हैं। खाये हुए पदार्थ पचकर जब रक्त में घुल-मिल जाते हैं तो रक्त में शर्करा की मात्रा बढ़ जाती है, परन्तु इसुंलिन इस बढ़ी हुई शर्करा को शीरी के भिन्न-भिन्न कोषों को उपलब्ध कराती रहती है। जिससे रक्त की मात्रा बढ़ने नहीं पाती। लेकिन, जब इंसुलिन के स्राव में कमी आ जाती है तो रक्त में शर्करा की मात्रा बढ़ जाती है। इसी स्थिति को मधुमेह कहते हैं। मधुमेह के घरेलू नुस्खें-

● नियमित तीन महीने तक करेले की सब्जी घी में बनाकर खाने से मधुमेह में निश्चित रूप से लाभ होता है।

● रात को मेथी के दाने पानी में भिगोकर रख दीजिए। सुबह उठकर दातून कर वह पानी पीकर मेथी के दाने धीरे-धीरे चबा लीजिए। मधुमेह धीरे-धीरे ठीक होता चला जायेगा।

● सुबह टमाटर, संतरा और जामुन का नाश्ता करें। इनकी मात्रा 300 ग्राम पर्याप्त है।

● रात को काली किशमिश भिगोकर रखिये। सुबह उसका जल छानकर पी लीजिए।

● आंवले के चूर्ण को भिगोकर उसे कुछ देर रहने दीजिए। फिर उसे छानकर उसमें नींबू का रस निचोड़कर सुबह उठते ही पी लीजिए।

● मधुमेह की शिकायत होने पर आम और जामुन का रस बराबर मात्रा में मिलाकर दिन में तीन बार लगातार एक महीने तक सेवन करें।

● जामुन के कोमल हरे पत्ते पीसकर नियमित 25 दिन तक प्रातः पानी के साथ पीने से पेशाब में शक्कर आना रुक जाता है।

-प्रस्तुतिः विनोद किला, दिल्ली

समृद्ध सुखी परिवार
अक्टूबर 2012

गृहिणी बनाम कामकाजी महिला

■ साध्वी कल्परसाश्री

वर्तमान समय में एक महिला का हर दृष्टि से आत्मनिर्भर होना अति-आवश्यक है। युगीन अपेक्षाओं को दृष्टिगत रखते हुए कामकाजी महिला बनना, आज प्राय: महिलाओं का स्वप्न होता है, पर ध्यान रखें कि इस स्वप्न को साकार करते हुए बच्चों व घर-परिवार की अवहेलना न हो। मेरे विचार से कोई भी महिला सबसे पहले एक गृहिणी है जो अपने घर-संसार का सुचारु रूप से संचालन करती है। अत: सामंजस्य बहुत आवश्यक है। एक कुशल गृहिणी के दायित्वों का निर्वाह करते हुए एक कामकाजी महिला बनें। यदि आप संतोषजनक आर्थिक स्थिति में हैं तो महिला का वर्किंग वूमन बनना जरूरी नहीं है। आखिर ऑफिस में काम की थकान का कुछ न कुछ असर तो पड़ता है और कभी-कभी आप यह भी अनुभव करेंगी कि बच्चे व पति संतुष्ट नहीं हैं।

कभी-कभी यह कहा जाता है कि घर की चारदीवारी में ही क्यों रहा जाए, कामकाजी महिला

बनकर स्वतंत्रता मिलती है, बहुत कुछ नया सीखने को मिलता है। व्यक्तित्व को निखारने का अवसर प्राप्त होता है। आत्म-विश्वास, आर्थिक स्वावलंबन और अपनी एक अलग पहचान बनाने का सोपान है- स्वतंत्रता। यह स्वतंत्रता मात्र गृहिणी बनकर प्राप्त नहीं हो सकती।

मूलत: इसमें कोई विरोध नहीं है कि आप गृहिणी है या कामकाजी महिला। हर पक्ष के लाभ भी हैं और नुकसान भी हैं। समय-नियोजन की कुशलता जितनी कामकाजी महिला को प्राप्त हो जाती है, उतनी गृहिणियों को बहुत सरलता से प्राप्त नहीं होती। अत: हमें यह ध्यान रखना जरूरी है कि आपकी योग्यताओं तथा क्षमताओं का सर्वश्रेष्ठ उपयोग किसमें हो सकता है।

आज की बढ़ती महंगाई के कारण उपजा संकट परिवार के दायित्व निर्वाह के लिए जैसे महिलाओं का कामकाजी होना आवश्यक सा हो गया है। दूसरी महत्वपूर्ण आवश्यकता अपनी क्षमताओं को समुचित रूप से उजागर करना, अपनी योग्यताओं को गृहस्थ कर्म के बोझ तले, छटपटाने, दबने, मरने पर विवश न होने देना।

वर्तमान में स्त्री स्वयं को पुरुष की छायानुगामिनी ही नहीं बनाए रखना चाहती है, इसमें उसके स्वाभिमान, अस्मिता और योग्यता को ठेस पहुंचती है, ऐसी स्थिति में स्वयं की पृथक, स्पष्ट और सुयोग्य पहचान बनाने हेतु भी कामकाजी बनना उपयुक्त समझती है- आज की नारी। ●

मुहूर्त से किए काम होते हैं फलदायी

■ नरेन्द्र देवांगन

किसी भी काम की शुरुआत यदि ज्योतिष और वास्तु के अनुसार हो तो उसके सफल होने की संभावना ज्यादा बढ़ जाती है। देवर्षि नारद, वशिष्ठ की वास्तु दृष्टि से वैशाख, श्रावण, मार्गशीर्ष और फाल्गुन मास सभी कार्यों के लिए उत्तम माने गए हैं।

व्यक्ति जीवन में यूं तो हर काम अपनी सुविधा के अनुसार संपन्न करता है, लेकिन ऋषि-महर्षि, मुनियों और ज्योतिष वास्तु के अनुसार प्रत्येक काम मुहूर्त के अनुसार किया जाए तो उसके सफल होने की संभावना कहीं ज्यादा होती है। विद्वानों के अनुसार जो कार्य नक्षत्र-मुहूर्त देखकर किए जाते हैं, उनमें ईश्वरीय सहमति शामिल होती है। नारद के अनुसार भवन निर्माण के लिए कार्तिक, माघ, मार्गशीर्ष फाल्गुन व वैसाख मास उत्तम माने गए हैं, जिन्हें वशिष्ठ की दृष्टि में पुत्र-पौत्र व धनकारक माना गया है। इन महीनों को वाद-विवाद रहित सर्वसम्मत अर्थकारक पत्नी व पुत्र आदि के लिए भी हितकारी माना गया है।

वास्तुशास्त्र के अनुसार जल, अग्नि से नष्ट गृह या जीर्ण गृह को नवीन बनाने में श्रावण-कार्तिक व माघ मास को लाभप्रद माना गया है। देवताओं के वास, जल के लिए नलकूप, बोरिंग या पार्क में जल सिंचन के लिए वैशाख,

श्रावण मार्गशीर्ष, फाल्गुन, कार्तिक व माघ मासों को भी पुण्यकारी माना गया है। उल्लेखनीय है कि पशुओं का आवास बनाने के लिए ज्येष्ठ मास, धान्य संग्रह, आश्विन, जल धारा व यंत्र निर्माण चैत्र में और भी ज्यादा शुभकारी माने गए हैं। महर्षि वशिष्ठ के मतानुसार गुरु व शुक्र उदय हो तो शुक्ल पक्ष के गृहारंभ में सब प्रकार के सुखों की प्राप्ति तथा कृष्ण पक्ष निर्माण से दिन में गृहारंभ शुभ व रात्रि में निषिद्ध माना गया है।

भवन निर्माण में तिथियां: प्रतिपदा में भवन निर्माण से निर्धनता, चतुर्थी में धन हानि, अष्टमी में अशांति, नवमी में शस्त्राघात, चतुर्दशी में स्त्री हानि व अमावस्या में राजभय माना गया है। लेकिन नक्षत्र व लग्न उत्तम हो तो उक्त तिथियों में निर्माण कार्य संपादित किया जा सकता है। विशेष रूप से ध्यान देने योग्य विषय यह है कि दिग्द्वार नक्षत्रों में भवन निर्माण नहीं करना चाहिए।

शुभ नक्षत्र और भवन निर्माण: महर्षि वशिष्ठ के अनुसार भवन में रवि गृह स्वामी कारक होता है। चंद्रमा पत्नी, गुरु सुख व धन का कारक शुक्र होता है। यदि ये कारक गृह गोचर व जन्म दशा से निर्बल, अस्त, बाल, वृद्ध व नीच राशि के हों तो अपने-अपने कारकों की हानि करते हैं। इसी प्रकार यदि चंद्र-बुध-गुरु-शुक्र नीच राशि या शत्रु राशि या निर्बल निस्तेज हो तो भवन निर्माण करने वाला निर्धन हो जाता है। भवन निर्माण में अश्विनी, उत्तरा, रेवती, हस्त, चित्रा, स्वाति, अनुराधा, पूर्वाषाढ़, धनिष्ठा, पुष्य, मृगशिरा व रोहिणी नक्षत्र शुभ माने गए हैं। इन नक्षत्रों में भवन निर्माण सर्वोत्तम माना गया है। श्रावण मास, शुक्ल पक्ष, सप्तमी तिथि, शनि दिन, स्वाति नक्षत्र, शुभ योग व सिंह लग्न के दिन गृहारंभ से पुत्र-धन की वृद्धि, वाहन सहित सभी प्रकार के सुख, उपयोगी वस्तु व ऐश्वर्य प्राप्ति होती है। सूर्य के नक्षत्र से 5, 7, 9, 12, 19 व 26वें नक्षत्रों में भूमि शयन करती है। अत: भूलकर भी इनमें भवन निर्माण, जल स्रोत आरंभ व यंत्र निर्माण नहीं करना चाहिए।

-नरेन्द्र फोटोकॉपी,
पो. खरोरा-493225
जिला-रायपुर (छ.ग.)

वांगड़ के राजा-रानी कल्पवृक्ष

■ द्वारकेश भारद्वाज

प्राचीन काल से ही संपूर्ण विश्व में वृक्ष पूजन की परम्परा रही है। यहां तक कि वृक्ष को मुद्रा पर भी प्रतीक के रूप में अंकित किया जाता रहा है। ब्राह्मणों में तो वृक्ष पूजन का विशिष्ट स्थान है। जब एक ब्राह्मण बालक का यज्ञोपवित संस्कार होता है तो उसे गुरु (पंडित) सिर पर कपड़ा ढ़क कर जो शिक्षा देता है उसमें एक वाक्य यह भी होता है कि 'पेड़ पर पत्थर मत फेंकना नहीं तो पाप लगेगा।' आज की वैज्ञानिक और पर्यावरणवादी विचारधारा से भी अगर इस कथन को आंका जाए तो भी यह कसौटी पर खरा उतरेगा।

कल्पवृक्ष का भारतीय समाज में खासा महत्व है। हमारी यह भावना सिर्फ मोह तक ही सीमित नहीं है, बल्कि कल्पवृक्ष की पूजा करके उसकी रक्षा करना सांस्कृतिक दायित्व माना गया है। वैसे कल्पवृक्ष केवल उसकी धार्मिक मान्यताओं के कारण ही पूजनीय है लेकिन अगर उसकी अन्य विशेषताओं की ओर भी दृष्टिपात किया जाए तो वास्तव में इतना गुणवान वृक्ष पूजा के योग्य ही प्रतीत होता है।

राजस्थान के सुदूर दक्षिण में है बांसवाड़ा। जिसे वाग्वर प्रदेश और पुष्प प्रदेश के नाम से भी जाना जाता है। इसे वांगड़ भी कहते हैं। बांसवाडा राजस्थान, मध्यप्रदेश और गुजरात की सीमा रेखाओं पर स्थित है। पुरातात्विक, ऐतिहासिक और धार्मिक दृष्टि से यह क्षेत्र चित्ताकर्षक दर्शनीय स्थलों का संगम है। रामायण और महाभारतकालीन संस्कृति के दृश्य आज भी यहां यत्र-तत्र देखने को मिल जाते हैं। पुराणों में भी इसका उल्लेख मिलता है। स्कंधपुराण में इस क्षेत्र का कुमारिका खण्ड नाम से उल्लेख है। नागखण्ड के रूप में भी इसे सम्बोधित किया गया है। इसी वाग्वर प्रदेश में कल्पवृक्ष नामक प्राचीन दुर्लभ वृक्ष भी विद्यमान है, जिनके बारे में कहा जाता है कि वे भारत में गिनती के स्थानों पर ही हैं और इनकी प्रजाति उत्तरोत्तर समाप्त होती जा रही है।

जनश्रुति है कि प्राचीनकाल में कल्पवृक्ष के नीचे बैठकर कोई व्यक्ति जो भी कल्पना करता था, उसे वहीं मनोवांछित प्राप्ति होती थी। अमरवाणी में इसके लिए कहा गया है कि यह दीनता को दूर करने वाला है। गोपाल सहस्त्रनाम तथा विष्णुनाम स्त्रोत में कल्पवृक्ष भगवान के रूप में वर्णित है।

कल्पवृक्ष के धरती पर आने के बारे में धार्मिक ग्रंथों में कई कहानियां प्रचलित हैं। लोकमान्यताओं ने भी इनको बल प्रदान किया। पुराणों के अनुसार देवराज इन्द्र से जीतकर भगवान श्रीकृष्ण इसे पृथ्वी पर लाये थे।

लोककथाओं में इस प्रकार से वर्णित कल्पवृक्ष के नाम से विख्यात ऐसे दो वृक्ष बांसवाड़ा शहर से रतलाम मार्ग पर बाईतालाब (आनंद सागर) के पास एक प्राचीन कुंज में स्थित हैं।

प्राचीन कथाओं के अनुसार देवर्षि नारद स्वर्ग से कल्पवृक्ष का एक पुष्प लेकर द्वारकापुरी गए तथा उसे श्रीकृष्ण को भेंट किया। श्रीकृष्ण ने उसे अपनी पटरानी रूक्मणी को दिया। इससे सत्यभामा को बड़ा दुख हुआ तथा वे कोप भवन चली गई तब श्रीकृष्ण ने उनसे कहा-''तुम दुख न करो, मैं तुम्हें परिजात वृक्ष ही लाकर दे दूंगा।'' उसी समय इन्द्र, श्रीकृष्ण के पास आए और श्रीकृष्ण ने उनसे कल्पवृक्ष मांगा। श्रीकृष्ण ने उनसे यह भी वादा किया कि अगर वे उन्हें ये दे देंगे तो वे उनके लिए भीमासुर नामक असुर और उसकी सेना का संहार कर देंगे। इन्द्र इससे सहमत हो गए। जब श्रीकृष्ण ने भीमासुर का सेना सहित वध कर दिया तो वे अपना मंतव्य सिद्ध करने के लिए इन्द्र के पास गये। लेकिन इन्द्र ने श्रीकृष्ण की मांग पूरी नहीं की। तब श्रीकृष्ण बलपूर्वक कल्पवृक्ष ले आए। श्रीकृष्ण जो कल्पवृक्ष लाये वह शची का प्रिय था तथा इस कारण उन्हें (श्रीकृष्ण) को नंदनवन के वनपालों, इन्द्र और उसकी सेना के साथ युद्ध करना पड़ा। विजय के पश्चात एक बार तो श्रीकृष्ण ने कल्पवृक्ष व्यंग्य के साथ वापस इन्द्र को लौटा दिया लेकिन लज्जित इन्द्र ने उनसे आग्रह किया कि वे उसे द्वारिकापुरी ले ही जाएं।

लोककथाओं में इस प्रकार से वर्णित कल्पवृक्ष के नाम से विख्यात ऐसे दो वृक्ष बांसवाड़ा शहर से रतलाम मार्ग पर बाईतालाब (आनंद सागर) के पास एक प्राचीन कुंज में स्थित हैं। शोधकर्ता बताते हैं कि इस क्षेत्र में पहले ऐसे 6-7 वृक्ष थे। एक कल्पवृक्ष तो देखभाल के अभाव में तीन वर्ष पूर्व ही नष्ट हुआ है। विभिन्न जातियों के सैकड़ों वृक्षों के बीच में दो वृक्ष दूर से ही आकर्षित करते हैं तथा अपनी उपस्थिति का पृथक से भान करवाते हैं। कल्पवृक्ष का वानस्पतिक नाम एडनसोनिया डिजिटेटा है तथा यह बोम्बेकेसी कुल का सदस्य है। इसकी पत्तियां अंगुलियों जैसी आकृति वाली होती हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार कल्पवृक्ष की आयु लगभग पांच हजार वर्ष होती है।

बांसवाड़ा के इन दो कल्पवृक्षों में से एक का तना अधिक व्यास का है जिसे 'रानी' के नाम से पुकारा जाता है। 'राजा' कल्पवृक्ष के तने का व्यास अपेक्षाकृत कम है और यह रानी के पास ही स्थित है। कुछ वर्षों तक 'युवरानी' कहा जाने वाला एक अन्य कल्पवृक्ष भी था जो कि अब नष्ट हो चुका है। राजा की ऊंचाई 40 फीट और गोलाई 13.7 फीट है। रानी की ऊंचाई और गोलाई क्रमशः 50 फीट और 20.5 फीट है। रानी जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, मादा कल्पवृक्ष है। नष्ट हुए युवरानी कल्पवृक्ष की ऊंचाई 45 फीट तथा गोलाई 18.2 फीट थी। रानी पर सफेद रंग के बड़े-बड़े कठोर आवरणयुक्त तथा लगभग बैगन के आकार के आकर्षक पुष्प लगते हैं। नर (राजा) कल्पवृक्ष पर पुष्प नहीं लगते हैं। आमतौर पर ये वृक्ष हरे-भरे ही रहते हैं लेकिन अगर मौसम अत्यधिक प्रतिकूल रहे तो पत्तियां झड़ भी जाती हैं और ये ठूंठ सरीखे लगते हैं। इन पर लगने वाले खट्टे-मीठे स्वाद वाले बीजयुक्त फलों को यहां के आदिवासी बड़े चाव से खाते हैं। कल्पवृक्ष के प्रति आस्था और मनोकामना करवाने की अभिलाषा आज भी लोगों में विद्यमान है। हरियाली अमावस्या के दिन इन कल्पवृक्षों की पूजा-अर्चना अपने चरम पर होती है। इस दिन यहां मेला लगता है तथा श्रद्धालु आकर वृक्षों की परिक्रमा करते हैं और मन में सोचे हुए कार्य के लिए मनौती मानते हैं। कल्पवृक्ष की पूजा की भी विशेष प्रथा है। पुरुष, राजा कल्पवृक्ष के नीचे तथा स्त्रियां, रानी कल्पवृक्ष के नीचे बैठकर पूजा करती हैं। कुछ लोग वृक्षों के नीचे हवन और तांत्रिक कर्मकाण्ड भी करवाते हैं। श्रद्धालु कल्पवृक्ष के पुष्प तथा फल को लक्ष्मीवर्धक और शुभ मानते हैं तथा उन्हें अपने पूजागृह और दुकानों आदि में रखते हैं।

धार्मिक मान्यताओं और आस्थाओं वाले कल्पवृक्ष की स्थिति सुरक्षित नहीं है। देखरेख और वन विभाग की अकर्मण्यता के कारण ही तीसरा कल्पवृक्ष नष्ट हुआ है और अब शेष दो पर 'वर्जित' की पट्टिका लगाकर विभाग ने अपने दायित्वों की इतिश्री मान ली है।

-बी-68, हवेली ज्ञान द्वार,
सेठी कॉलोनी
जयपुर-302004 (राजस्थान)

आध्यात्मिक साधना से जोड़ें संगीत

■ आचार्य दिव्यचेतनानंद

मनुष्य ने मानव सभ्यता के आरंभ में ही गाना गाना शुरू कर दिया था। अपनी धुन में वह कुछ-न-कुछ गाया-गुनगुनाया करता था। इसी से गीत-संगीत जन्मे। सभ्यता और संस्कृति के विकास के साथ-साथ संगीत की धारा और पुष्ट हुई है। भारत भूमि को कई तत्वदर्शी आध्यात्मिक संगीत-साधकों ने पवित्र किया है। ये संगीत साधक अपनी साधना से अर्जित संपदा को मानव कल्याण के लिए अपने पीछे छोड़ गए हैं। सच तो यह है कि भारतीय संगीत धारा वेद-उपनिषदों के समय से लेकर अभी तक अनेक साधकों के योगदान से समृद्ध हुई है। संगीत को अगर आध्यात्मिक साधना के साथ जोड़ दिया जाए तो मनुष्य का आध्यात्मिक आनंद पाने का मार्ग और भी सरल हो सकता है। वैसे तो ज्यादातर मनुष्य अपने जीवन निर्वाह और भौतिक सुख पाने के कार्यों में व्यस्त रहते हैं। किन्तु यह भी याद रखना चाहिए कि हमें भौतिक सुख से आगे बढ़कर आध्यात्मिक आनंद प्राप्त करने की कोशिश करनी चाहिए। ऐसा आनंद आध्यात्मिक साधना किए बिना नहीं मिल सकता और इस साधना में अगर संगीत शामिल हो जाए, तो मन की शांति पाई जा सकती है।

मनुष्य के जीवन में मन ही प्रधान है, इसलिए साधना के लिए सबसे पहले मन को तैयार करना होगा। मन को स्थूल से सूक्ष्म और सूक्ष्म से सूक्ष्मतर की ओर ले जाना होगा। इसी उद्देश्य से श्री आनंदमूर्ति ने 'प्रभात संगीत' की एक नई अवधारणा प्रस्तुत की है। इसके लिए संगीत के अलावा कीर्तन को भी साधना का अंग बनाना जरूरी है। इस तरीके से सहज ही आध्यात्मिक आनंद की प्राप्ति हो सकती है। दरअसल संगीत गीत, नृत्य और वाद्य तीनों का सम्मिलित नाम है। जब मनुष्य आनंद की खोज में निकलता है, तब वह साधना से पहले कीर्तन करता है। कीर्तन में तीनों चीजों का ही समावेश है। परमपुरुष को पाने के लिए जब वह कीर्तन करता है तो वह नाचता है, गाता है और वाद्य यंत्र भी बजाता है। जब मनुष्य सिर्फ गाता है तो उस अवस्था को 'नंदन विज्ञान' कहते हैं। क्योंकि मन इस अवस्था में स्थूल से सूक्ष्म की ओर चला जाता है। जब वह गाते गाते कीर्तन करने लगता है और कीर्तन में भावविभोर हो जाता है, उस समय उसे पता ही नहीं चलता है कि वह है कहां? इस अवस्था को 'मोहन विज्ञान' कहते हैं।

नंदन विज्ञान और मोहन विज्ञान के अंतर को थोड़ा और स्पष्ट करने की जरूरत है। मन की सूक्ष्म से सूक्ष्मतर की ओर बढ़ने की जो गति है, उसे नंदन विज्ञान कहते हैं। इस अवस्था में आगे बढ़ते हुए मनुष्य एक ऐसे स्तर पर पहुंचता है, जब वह इस सुंदर अनुभूति से आगे चिर-सुंदर के और अधिक निकट पहुंचता है। तब फिर उस सुंदर का स्वाद लेने की स्थिति उसकी नहीं रहती। इस अवस्था में गाना तो बहुत मधुर लगता है, पर मनुष्य तब पहले वाले स्तर पर नहीं रह पाता है। इस अवस्था में वह मनुष्य होने की स्थिति से ऊपर उठ जाता है। जबकि जिसे सुंदर लगता है वह तो मनुष्य है। इसी क्रम में एक ऐसा स्तर भी आता है, जब नाच उसे पागल बना देता है, वह सुध-बुध खो बैठता है। नंदन विज्ञान की इस उर्ध्वतर अवस्था को ही मोहन विज्ञान कहा जाता है। इस अवस्था में वह खुद ही मोहित हो जाता है। उसमें फिर आस्वाद ग्रहण की अवस्था नहीं रहती।

मनुष्य ने कितने ही प्रकार के नाच-गाने रचे हैं। भविष्य में वह और कुछ नया रचेगा। यह सभी कुछ वह नंदन विज्ञान के बीच स्वयं आनंद पाने के लिए करेगा। किन्तु इस सभी नाच-गानों से आगे होता है कीर्तन। मनुष्य कीर्तन करता है परमपुरुष को आनंद देने के लिए, स्वयं आनंद पाने के लिए नहीं। यह आनंद देते-देते जब वह अपने को खो देता है, अपना अस्तित्व भुला देता है, तो उसकी यह अवस्था मोहन विज्ञान कहलाती है? तो इसका उत्तर यह है कि मनुष्य के जीव भाव को परमपुरुष के शाश्वत भाव के साथ एकाकार कर देना ही मोहन विज्ञान है। ●

भूल-सुधार

'समृद्ध सुखी परिवार' पत्रिका के अगस्त-2012 अंक में प्रकाशित श्री रिखबजी सुराणा के आलेख 'दरगाह से पुरानी दादाबाड़ी' के संदर्भ में हमें श्री ललित कुमार नाहटा, नई दिल्ली का पत्र प्राप्त हुआ जो गत अंक में अधूरा प्रकाशित हो पाया। उससे संदर्भित तथ्य इस प्रकार है- 'प्रथम दादागुरु श्री जिनदत्त सूरीश्वरजी का पार्थिव शरीर अग्नि को समर्पित किया गया था। उनके अतिशय के प्रभाव से अंतिम समय में उनको ओढ़ायी गई चादर, चौलपट्टा व मुहपत्ती स्वत: उड़कर गुजरात राज्य के पाटण नगर के ज्ञान भंडार में जा गिरे। स्वत: उड़कर जाने वाली बात सही नहीं। जहां तक मेरी जानकारी है चादर व मुहपत्ती अग्नि में जले नहीं जिसे संभवतया पहले पाटण में रखा व बाद में जैसलमेर ज्ञान भंडार में हस्तांतरित किया गया।

-संपादक

अमृत फल आंवला

आंवला आप कच्चा खाएं अथवा पकाकर इसके विटामिन कभी समाप्त नहीं होते हैं और सूखने के बाद भी इसके विटामिन और पौष्टिक तत्व ज्यों के त्यों बने रहते हैं। आंवला पांच रसों खट्टा, मीठा, कड़वा, चटपटा, कसैला होने के कारण अधिक गुणकारी होता है। इन पांच रसों के वजह ही आंवले में व्याधि प्रतिरोधक सामर्थ्य भरपूर मात्रा में समाहित रहती है।

■ **डॉ. हनुमान प्रसाद उत्तम**

चरक संहिता के मुताबिक आंवले के प्रयोग से सौंदर्य, स्फूर्ति, स्मरण शक्ति, नवयौवन तथा इन्द्रियों के बल की वृद्धि होती है। इसके सेवन से शारीरिक तथा मानसिक उत्तेजना नियंत्रित रहती है तथा व्यक्ति में संयम की भावना पैदा होती है। इसकी तासीर शीतल होती है। यह स्त्री एवं पुरुष दोनों के लिए ही हितकारी होता है। समुचित उपाय से इस्तेमाल किये जाने पर आंवला बहुउद्देशीय दवा तथा ताकत प्रदत्त करने वाला टॉनिक भी बन जाता है। अपने गुणों की व्यापकता के वजह आंवले को भारतीय चिकित्सा प्रणाली में अमृत माना जाता है।

आंवला अक्सर समस्त भारतवर्ष में सुगमता से प्राप्त हो जाता है। वैज्ञानिक परीक्षण के अनुसार आंवले में 82.2 प्रतिशत पानी, 14.1 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, 0.7 प्रतिशत नमक, 0.5 प्रतिशत प्रोटीन, 0.1 प्रतिशत वसा, 0.05 प्रति कैल्शियम, 0.02 प्रतिशत फास्फोरस और 2.4 प्रतिशत रेशा होता है। 100 ग्राम आंवले में 1.2 मिलीग्राम आयरन, 0.2 मिलीग्राम निकोटिनिक अम्ल होता है। इसके अलावा आंवले में विटामिन 'सी' प्रचुर मात्रा में होता है।

चाहे आंवला आप कच्चा खाएं अथवा पकाकर इसके विटामिन कभी समाप्त नहीं होते हैं और सूखने के बाद भी इसके विटामिन और पौष्टिक तत्व ज्यों के त्यों बने रहते हैं। आंवला पांच रसों खट्टा, मीठा, कड़वा, चटपटा, कसैला होने के कारण अधिक गुणकारी होता है। इन पांच रसों के वजह ही आंवले में व्याधि प्रतिरोधक सामर्थ्य भरपूर मात्रा में समाहित रहती है।

महिलाओं के लिए आंवला स्फूर्ति प्रदत्त करके उसके यौवन को स्थायी बनाये रखने में सहायक हाता है। गर्भावस्था में स्त्री के रक्ताल्पता की आपूर्ति भी आंवला करता है।

20-25 ग्राम आंवले का मुरब्बा सेवन करने से जरूरी विटामिन 'सी' प्राप्त हो जाती है। आंवले द्वारा निर्मित 'च्यवनप्राश' के सेवन से सर्दी-जुकाम तथा दमे के मरीजों को भी काफी फायदा मिलता है। मधुमेह (डायबिटीज) के मरीजों को आंवले का रस चूसना बहुत लाभप्रद होता है, चूंकि आंवला रक्त में शुगर (शक्कर) को बढ़ने से रोकता है।

वातनाशक और पित्तनाशक होने के परिणामस्वरूप आंवला वायु रोग को समूल खत्म करने की सामर्थ्य रखता है। आंवले के रस के सेवन करने से नेत्रों की रोशनी बढ़ती है और मोतियाबिंद तक अच्छा हो जाता है। आंवले के मुरब्बे के सेवन से हृदय रोग की संभावना कम होती है। चिकित्सकों के मुताबिक रात्रि में दूध के साथ आंवले के चूर्ण के सेवन हृदय मरीजों के लिए अत्यंत ही हितकारी है। इस प्रकार आंवला स्वास्थ्य के लिए अत्यधिक गुणकरी और लाभदायक है।

-जन शिक्षण इंटर कॉलेज
प्रेमपुर-बड़ागांव, कानपुर-208001

मां से बड़ा न कोय

स्वामी विवेकानंद से एक जिज्ञासु ने प्रश्न किया, ''माँ की महिमा संसार में किस कारण से गायी जाती है?''

स्वामीजी मुस्कराये। उस व्यक्ति से बोले, ''पांच सेर वजन का एक पत्थर ले आओ।

जब व्यक्ति पत्थर ले आया तो स्वामीजी ने उससे कहा, ''अब इस पत्थर को किसी कपड़े में लपेटकर अपने पेट पर बांध लो और चौबीस घंटे के बाद मेरे पास आओ तो मैं तुम्हारे प्रश्न का उत्तर दूंगा।''

स्वामीजी के आदेशानुसार उस व्यक्ति ने पत्थर को अपने पेट पर बांध लिया और चला गया। पत्थर बांधे हुए वह दिन भर अपना काम करता रहा, किन्तु हर क्षण उसे परेशानी और थकान महसूस हुई। शाम होते-होते पत्थर का बोझ संभाले हुए चलना-फिरना उसके असह्य हो उठा। थका-मांदा वह स्वामीजी के पास पहुंचा और बोला, ''मैं इस पत्थर को अब और अधिक देर तक बांधें नहीं रख सकूंगा। एक प्रश्न का उत्तर पाने के लिए मैं इतनी कड़ी सजा नहीं भुगत सकता।'' स्वामीजी मुस्कराते हुए बोले, ''पेट पर बंधे इस पत्थर का बोझ तुमसे कुछ घंटे भी नहीं उठाया गया और माँ अपने गर्भ में पलने वाले शिशु को पूरे नौ माह तक ढोती है और गृहस्थी का सारा काम करती है। संसार में माँ के सिवा कोई इतना धैर्यवान और सहनशील नहीं है, इसीलिए मां से बढ़कर इस संसार में कोई और महान नहीं है।

-विपिन जैन, लुधियाना

आधुनिकता और टूटते पारिवारिक संबंध

■ डॉ. राम भरोसे

भारतीय संस्कृति में 'विवाह' को एक महत्वपूर्ण संस्कार माना गया है। पवित्र अग्नि के समक्ष सात फेरों से एक अनोखें, अनजाने से सात जन्मों का रिश्ता जुड़ जाता है। विवाह को नये जीवन की संज्ञा दे तो कोई अतिश्योक्ति न होगी। बल्कि लड़कियों के सन्दर्भ में विवाह को उनका 'नया जीवन' कहा गया है। दोनों ही स्त्री और पुरुष के लिए विवाह एक नये जीवन में प्रवेश होता है। किन्तु बड़े दु:ख की बात है कि 'विवाह' का जो महत्व हमारी संस्कृति में था, वह आज आधुनिक युग तक आते-आते बदल चुका है। इस भागदौड़ भरी जिंदगी में विवाह का खूबसूरत ख्वाब आंखों में चुभने-सा लगा है, टूटने लगा है, बिखरने लगा है, क्षत-विक्षत हो चुका है। विवाह का अर्थ इसके साथ ही इससे जुड़ी धारणायें और मान्यताएं अपना दम तोड़ रही हैं।

समाजशास्त्रियों का मानना है कि युवा वर्ग की इस दयनीय स्थिति के पीछे सबसे बड़ा हाथ पाश्चात्य संस्कृति का है। एक मुख्य बात यह भी है कि युवा पीढ़ी पाश्चात्य संस्कृति से सारी गलत, अस्वाभाविक बातों को ग्रहण कर रही है। वर्तमान युवा पीढ़ी स्वतंत्रता के नाम पर उच्छृंखल होती जा रही है। उसे आधुनिकता और स्वतंत्रता का सही अर्थों में ज्ञान नहीं है। उनके अनुसार पब कल्चर, देर रात्रि पार्टियां करना, घटते वस्त्र, सड़कों पर स्वछन्द होकर घूमना ही आधुनिकता है। आज के बर्गर-पिज्जा कल्चर वाली युवा पीढ़ी भौतिक सुख-सुविधाओं के पीछे भागते हुए जल्दी से पद और पैसा पाने की कोशिश में जेट की रफ्तार से दौड़ रही है और इस बेलगाम, कभी खत्म न होने वाली भागदौड़ में पारिवारिक संबध रोजाना टूट रहे हैं।

भारतीय संस्कृति में जहां संबंधों को ही नहीं सामान्य चीजों को भी सहेजने व संवारने पर महत्व दिया जाता है, वहीं पश्चिमी सभ्यता में 'यूज एंड थ्रो' कॉन्सेप्ट का चलन है और पश्चिम आयातित इस सिद्धान्त ने यहां की युवा पीढ़ी को पूरी तरह से अपने जद में ले लिया है। जिससे बाहर आ पाना मुश्किल है। जहां 'यूज एंड थ्रो' का कल्चर अपने पैर पसार रहा हो वहां प्रेम, त्याग, समर्पण आदि शब्द काल्पनिक लगते हैं। यह कल्चर सामान्य चीजों तक सीमित रहता तो ठीक था परन्तु इसका प्रभाव अब रिश्तों पर भी हो रहा है। पतिव्रता 'सीता' व पत्नीव्रता 'श्रीराम' वाले भारत की वर्तमान पीढ़ी उम्रभर किसी एक के साथ बंधे रहना नहीं चाहते अपितु रोज बदलते वस्त्रों की तरह नयी गर्लफ्रेंड या बॉयफ्रेंड बदलने में विश्वास रखते हैं। इस नयी पीढ़ी ने अपनी सभी सीमाओं को लांघ दिया है। वे आगे बढ़कर पश्चिम आयातित विचारों को सहजता से अपनाने लगे हैं। स्वछंद जीवन जीने की इच्छा रखने वाले इन युवाओं का भविष्य पतन की ओर अग्रसर हो रहा है। फलस्वरूप विवाह जैसी महत्वपूर्ण सामाजिक उत्तरदायित्वों से बचना एवं मुक्त रहना चाहते हैं। लीव इन रिलेशनशिप जैसे आधुनिक संबंधों ने इस स्थिति को और भी गम्भीर बना दिया है।

युवाओं की वर्तमान स्थिति का एक दुखद पहलू यह भी है कि उनकी इस अवस्था के जिम्मेदार उनके माता-पिता भी है। संतान को माता-पिता के व्यक्तित्व का दर्पण माना गया है। अत: माता-पिता अपने बच्चों की जैसी परवरिश करेंगे, उनके बच्चे बड़े होकर वैसे ही बनेंगे। आप जो शिक्षा-संस्कार देंगे उन्हीं गुणों के साथ युवा बनेंगे। साधारणत: कुछ हद तक हमारा बाहरी परिवेश, कॉलेज के मित्रों के साथ का प्रभाव भी बच्चों पर अवश्य पड़ता है। किन्तु बालमन पर मुख्य प्रभाव आप (माता-पिता) द्वारा दिये गये संस्कारों का ही पड़ता है।

भारतीय परिवारों में आज नये दबावों व चुनौतियों के उभरने से वह एक तरह के बदलाव से गुजर रहे हैं। एक ओर तो प्रत्येक वस्तु प्राप्त करने की चाह हमें ज्यादा से ज्यादा पैसे कमाने या बहुत जल्दी अमीर बनने के लिए उकसा रही है तो दूसरी ओर भयावह स्थिति यह है कि हम भारतीय परम्परागत व पाश्चात्य दोनों ही शैलियों को अपनाने व उनके बीच सामंजस्य बैठाने के मध्य झूल रहे हैं। संयुक्त परिवार तो पैसे के कारण पहले ही टूट चुके है। लेकिन अब एकल परिवारों में भी इसका नकारात्मक असर दिखाई देने लगा है। तेज दौड़ती जिंदगी की देन है अस्थिरता, जिसकी वजह से आपसी रिश्तों में कम्यूनिकेशन (आपसी बोलचाल व व्यवहार) की कमी के साथ ही तनाव ने सामान्य जीवनशैली को भी प्रभावित कर उसे भी गौण बना दिया है। आज स्थिति यह हो चुकी है कि पति-पत्नी के बीच एक तालमेल विकसित हो, उससे पहले ही सबंधों में दरार पड़ने लगती है।

पैसा बढ़ने के साथ उनकी अपेक्षाएं जितनी बढ़ती जाती है, संवेदनाएं उतनी ही कम होती जाती है। महत्वाकांक्षाएं पूरी करने के लिए लगाई गयी यह दौड़ भी हमारे जीवन का हिस्सा है, लेकिन कई बार यह इतनी तेज हो जाती है कि हमारे जीवन मूल्य, आदर्श और प्रेरणा सब की सांस फूल जाती है।

पैसा आधुनिकता की देन है जो आज की पीढ़ी के लिए मौज मस्ती करने और सारी भौतिक चीजें पाने का पर्याय-सा बन चुका है, ऐसी स्थिति में इस बात का भी निर्माण न्यायिक पहलू बन गया है कि विवाह कायम रहेगा या टूटेगा। परिवार के मोती माला में बने रहेंगे या बिखरते हुए अपने अस्तित्व की तलाश करेंगे जो कि असम्भव है। कटु सत्य तो यह है कि पैसा बढ़ने के साथ-साथ उनके बीच के फासले भी बढ़ने लगे हैं। पति-पत्नी दोनों ही अपनी जिदंगी को अपनी-अपनी शर्तों पर जीना चाहते हैं। अपने फैसलें स्वयं करने लगते हैं। जब अकूत पैसा हाथ में हो तो जीने के अर्थ व शैली दोनों ही स्वत: बदल जायेगी। अगर अभी भी हम इस सन्दर्भ में गम्भीर ना हुए और इस संवेनदशील विषय पर मौन रहे तो वो दिन दूर नहीं कि विवाह शब्द किताबों में सीमित होकर रह जाएगा। समाज के बचाव के लिए इस पहलू पर ध्यान देने की आवश्यकता है। हमें यह भली प्रकार सोचना चाहिए कि हमारे आपसी संबंध हमारे लिए उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितने कि हमारे लिए अन्य भौतिक वस्तुएं। संबंधों की महत्ता को कदापि नकारना नहीं चाहिए।

-हिन्दी-विभाग, बी.एस.एम.पी.जी. कॉलेज, रुड़की-हरिद्वार (उत्तराखण्ड)

सत्यं, शिवं और सुन्दरम् की प्रतीक है मां

■ मंजुला जैन

मां वह शक्ति है, जो किसी भी परिस्थिति को सहन कर अपनी संतान के शरीर और मन को पोषण देती है। बालक के लिये मां जननी ही नहीं होती, अपितु देवता होती है, गुरु होती है, भगवान होती है और सबकुछ होती है, इसलिये दुनिया में सर्वाधिक गौरवपूर्ण और सर्वश्रेष्ठ पद है 'माँ'। इस लघु शब्द में जितनी मिठास है उतनी मधु, मिश्री, मिष्ठान्न आदि किसी भी वस्तु में नहीं है। माँ कहते ही मुंह भरता है। सुप्रसिद्ध कवयित्री महादेवी वर्मा ने ठीक कहा था–'नारी सत्यं, शिवं और सुंदर का प्रतीक है। उसमें माँ का रूप ही सत्य, वात्सल्य ही शिव और ममता ही सुंदर है।

आखिर 'माँ' को यह महत्त्वपूर्ण एवं आदरपूर्ण पद क्यों मिला? क्यों 'माँ' शब्द में इतनी मिठास है, गौरवपूर्ण अनुभूति है? इसके उत्तर में अनुभवविदों ने बताया–हमारी भारतीय परंपरा में भारतमाता, राजमाता, गौमाता की तरह धरती को भी माता कहा जाता है। वह इसलिए कि धरती पैदा करती है। वह निर्मात्री है, सृष्टा है, संरक्षण देती है, पोषण करती है, बीज को विस्तार देती है, अनाम उत्सर्ग करती है, समर्पण का सितार बजाती है, आश्रय देती है, ममता के आंचल में सबको समेट लेती है और सब कुछ चुपचाप सह लेती है। इसीलिए उसे 'माता' का गौरवपूर्ण पद मिला। इंसान को जन्म देने वाली माँ की भूमिका भी यही है और इसीलिये महत्वपूर्ण है।

वस्तुतः माँ की ममता का कोई ओर-छोर नहीं है। उसकी ममता का दरिया किस तरह बहता है। मदर टेरेसा आदि माताओं से जीवन-पोथी के अनेकानेक अध्याय सृजित हुए हैं। मैंने तो स्वयं अपनी माता जो ममता पायी है, जो शक्ति पायी है, जो पवित्रता पायी है, वहीं मेरे जीवन की अमूल्य थाती है और उसी से जीवन गतिमान है। किंतु वर्तमान परिवेश को देखते हुए यह सवाल अवश्य खड़ा होता है कि क्या आज की माँ जननी की भूमिका का सम्यक् निर्वहन कर रही है? क्या बच्चा नागरिकता का पहला पाठ माँ की वात्सल्यमयी गोद में सीख पा रहा है? जबकि वस्तुस्थिति तो यह है कि माँ की गोद उसे नसीब होती कहाँ है? कुक्षि से बाहर आते ही उसे अलग पालने में सुला दिया जाता है। सोता है तो दूध की बोतल उसके मुंह से लगा दी जाती है। उसका लालन-पालन या देखरेख नर्स या आया के द्वारा होती है अथवा डे केयर

माँ धरती की धुरा है। स्नेह का स्रोत है। परिवार की पीठिका है। पवित्रता का पैगाम है। उसके स्नेहिल साए में जिस सुरक्षा, शीतलता और शांति की अनुभूति होती है वह हिमालय की हिमशिलाओं पर भी नहीं होती।

सेंटर, बेबी केयर सेंटर में भेजकर कर्त्तव्यपूर्णता का लेबल लगा दिया जाता है। दो-ढ़ाई वर्ष का होते ही नर्सरी में कम्प्यूटर द्वारा उसे अक्षर-बोध प्राप्त होता है। कुछ बड़ा होते ही उसे होस्टल में प्रविष्टि दिला दी जाती है। कितनी आधुनिक माताएं तो ऐसी हैं जिन्हें अपने बच्चों से संवाद स्थापित करने का क्षण भी उपलब्ध नहीं होता। करें भी कैसे ? उन्हें अपने निजी कार्यक्रमों से ही फुर्सत नहीं है। तब भला वह कैसे उन्हें बात-बात में तत्त्वबोध दें? कब मीठी-मीठी प्रेरक लोरियां सुनाकर संस्कारों की सौगात सौंपे? किस माध्यम से पारिवारिक, सामाजिक मान-मर्यादाओं की अवगति दें? कैसे जीवन में धर्म की उपयोगिता का अहसास करवाएं? तब फिर शून्यता के सिवा शेष हाथ भी क्या आएगा?

क्या बच्चे को जन्म देना ही मातृत्व की इतिश्री है, नहीं जन्म से ज्यादा महत्वपूर्ण है जीवन का निर्माण। हर स्त्री अपने ममतामयी स्वभाव के कारण माता होती है। उसकी ममता, समता और क्षमता अतुलनीय है। आधुनिक वेश-भूषा में बच्चों को सुसज्जित रखना, उनके नन्हे हाथों में इलेक्ट्रोनिक गेम्स, वीड़ियो गेम्स, गन जैसे हिंसा फैलाने वाले खिलौने थमा देना, पोषक खान-पान की सामग्री जुटा देना, अच्छे स्कूल में दाखिला दिलवा देना, सुपर ट्यूटर की व्यवस्था कर देना ही पर्याप्त है?

ऐसी स्थिति में माँ का परम दायित्व है कि वह बच्चे की सही ढंग से परवरिश करे जो सृष्टि की पहली ईंट है तथा जिसकी किलकारियों में छिपे उल्लास को व्यक्त करने में दुनिया की सभी वर्णमालाएं और लिपियां बौनी साबित होती हैं, उसके शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और भावनात्मक विकास के लिए सचेत बनें। अपना कैरियर बनाने की चिंता के साथ-साथ बच्चे को इंसानियत के सांचे में ढालें। वरना माँ की ओर से बरती गई उपेक्षा का यह दंश कहीं उसके पूरे जीवन को मटियामेट न कर दे। अथवा उन्हें अंधेरी अनैतिक, खोह में न ढकेल दे।

इसलिए हर माँ के लिए यह अपेक्षित है कि वह समय रहते सजग हो जाए। बदलते परिवेश में आधुनिक माताओं के लिए यह आवश्यक है कि मैथिलीशरण गुप्त के इस वाक्य–''आंचल में है दूध'' को सदा याद रखें। उसकी लाज को बचाएं रखें और भ्रूणहत्या जैसा घिनौना कृत्य कर मातृत्व पर कलंक न लगाएं। बल्कि एक ऐसा सेतु बने जो टूटते हुए को जोड़ सके, रुकते हुए को मोड़ सके और गिरते हुए को उठा सके। नन्हे उगते अंकुरों और पौधों में जीवनशैली का अभिसिंचन दें ताकि वे शतशाखी वृक्ष बनकर अपनी उपयोगिता साबित कर सकें। ●

हाथ-हथेली के रंग-ढंग

■ डॉ. प्रेम गुप्ता

मानव जीवन में हाथ और हथेली का महत्व अत्यधिक होता है, ऐसा माना जाता है कि मजबूत और स्वस्थ हाथ प्रगति का सूचक है। हाथ के अभाव में मानव जीवन किस तरह का होगा, यह कल्पना भी करना कठिन हो जाता है। तभी तो आप भी देखते-सुनते होंगे कि अमुक व्यक्ति अपने जीवन में बहुत विकास करेगा क्योंकि इसके सर पर अच्छे हाथ हैं, अमुक का आप बाल बांका नहीं कर सकते हैं क्योंकि वह किसी विशेष व्यक्ति का हाथ है। इन सबसे सिर्फ एक ही मतलब निकलता है कि हाथ को कर्म माना जाता है और हाथ का महत्वपूर्ण अंग हथेली होता है। जीवन के ढेर सारी पहेलियों को ईश्वर इन्हीं हथेलियों में अंकित कर देता है जिन्हें देखते ही हस्तरेखा का विद्वान टेप रिकार्ड की तरह बोलना शुरु कर देता है और आप सिर्फ हां-हां करने के अलावा उन्हें हैरत से देखते रहते हैं। इन सब आश्चर्य को दिखाने में हथेली के आकार की बहुत महत्वपूर्ण भूमिका होता है, यहां हम हथेली के आकार प्रकार के बारे में कुछ महत्वपूर्ण बातों को बता रहे हैं। सामान्यत: हथेली को आकार के आधार पर निम्नलिखित भागों में विभक्त कर सकते हैं।

संकरी हथेली- ऐसे व्यक्ति सामान्यत: कमजोर प्रकृति वाले होते हैं। ऐसे व्यक्ति में कल्पनाशीलता का अभाव होता है तथा दु:खी चित्तवाले होते हैं। ये व्यक्ति अपने ही स्वार्थ को सर्वाधिक महत्व देते हैं और अपने स्वार्थ साधन में यदि सामने वाले व्यक्ति का अहित भी हो जाता है, तो ये इस बात की परवाह नहीं करते। ऐसे व्यक्तियों पर आसानी से विश्वास करना ज्यादा उचित नहीं कहा जा सकता। माना जाता है कि हथेली के किनारे पर बुध, मंगल और चंद्र पर्वतों के बीच बहुत कम स्थान रहने के कारण ऐसी विकृति आती हैं।

चौड़ी हथेली- जिन व्यक्तियों के पास चौड़ी हथेली होती है, वे चरित्र की दृष्टि से दृढ़ निश्चयी तथा मजबूत हृदय वाले होते हैं। उनकी कथनी और करनी में कोई भेद नहीं होता और एक बार जो ये बात अपने मुंह से कह देते हैं, उस पर खुद भी दृढ़ रहते हैं और यदि किसी को इस प्रकार का कोई आश्वासन दे देते हैं, तो उसे यथासंभव पूरा करने की कोशिश करते हैं।

अत्यधिक चौड़ी हथेली- ऐसे व्यक्ति सामान्यत: अस्थिर प्रकृति के, दूषित कल्पनावाले, हिंसक प्रवृति वाले होते हैं तथा इनकी प्रकृति धोखा देने की होती हैं। इनकी पहचान यह है कि इन लोगों की हथेली की लम्बाई की अपेक्षा चौड़ाई ज्यादा होती है। ऐसी हथेली वाले व्यक्ति तुरंत निर्णय नहीं ले पाते और किसी भी कार्य को

हाथ को कर्म माना जाता है और हाथ का महत्वपूर्ण अंग हथेली होता है। जीवन के ढेर सारी पहेलियों को ईश्वर इन्हीं हथेलियों में अंकित कर देता है

करने से पूर्व बहुत अधिक सोचते-विचारते रहते हैं। इनके जीवन में किसी कार्य का व्यवस्थित रूप नहीं होता। एक बार में ये एक से अधिक कार्य अपने हाथ में ले लेते हैं और उनमें से कोई भी कार्य भली प्रकार से पूर्ण नहीं होता, जिसकी वजह से इनके मन में निराशा भी घर कर लेती है। सामान्यत: ऐसे व्यक्ति जीवन में असफल ही होते हैं।

समचौरस हथेली- जिन व्यक्तियों की हथेली समचौरस होती है अर्थात हथेली की लम्बाई और चौड़ाई बराबर होती है, वे व्यक्ति स्वस्थ, सबल, शांत और दृढ़ निश्चयी होते हैं। ऐसे व्यक्ति पूरी तरह से पुरुषार्थी कहे जाते हैं। जीवन में ये जो भी बनते हैं या जो भी उन्नति करते हैं वह अपने प्रयत्नों के माध्यम से ही करते हैं। इनके स्वभाव में दृढ़ निश्चय होता है। किसी कार्य को ये तब तक प्रारंभ नहीं करते जब तक कि इन्हें उस कार्य को प्रारंभ कर लेते हैं, तो अपनी सारी शक्ति उसके पीछे नहीं लगा देते हैं और जब तक वह कार्य भली प्रकार से संपन्न नहीं हो जाता है, तब तक ये विश्राम नहीं लेते। इनके जीवन की सफलता का यही मूल रहस्य है। हथेली के आकार के साथ-साथ इसके रंगों का महत्व हस्त ज्ञान के लिए प्रमुख कारक होने के वजह से यहां उनका विवेचन आवश्यक हो जाता है।

लाल हथेली- जिनसे व्यक्ति की हथेली का रंग लाल होता है, वह क्रोधी स्वभाव का तथा दूसरों पर अविश्वास करने वाला व्यक्ति होता है। ऐसे व्यक्ति तुनक मिजाज भी होते हैं। किस समय ऐसा व्यक्ति गुस्सा हो जायेगा, इसका किसी को आभास नहीं हो पाता। सामान्यत: ऐसा व्यक्ति संकीर्ण विचारों वाला तथा अदूरदर्शी होता है।

अत्यधिक लाल हथेली- जिस व्यक्ति की हथेली का रंग अत्यधिक लाल होता है। वह क्रूर, अपराधवृत्ति वाला तथा जरूरत से ज्यादा स्वार्थी होता है। समय पड़ने पर यह मित्र को भी धोखा देने में नहीं चुकता। स्वार्थी इतना अधिक होता है कि यदि किसी का 100 रुपया का नुकसान होता हो और उससे इसको एक पैसे की बचत होती है, तो यह सामने वाले व्यक्ति को भी धोखा देने से नहीं चूकेगा। इसके साथ भलाई का व्यवहार करने पर भी समय पड़ने पर यह व्यक्ति धोखा देगा। ऐसे व्यक्ति पर विश्वास करना खतरे से खाली नहीं होता।

गुलाबी हथेली- जिस व्यक्ति की हथेली का रंग गुलाबी होता है, वह स्वस्थ, सहृदय तथा उन्नत विचारों वाला होता है। उसके रहन-सहन में एक शालीनता दिखाई देती है, ऐसा व्यक्ति उच्च विचारों का धनी एवं संतुलित मस्तिष्क वाला होता है। ऐसे व्यक्ति जीवन में अपने कार्यों से तथा अपने परिश्रम से सफल होते हैं, वास्तव में ऐसे व्यक्ति ही समाज को कुछ नया दे सकते हैं।

पीली हथेली- पीले रंग की हथेली रोग सूचक होती है। जिस व्यक्ति की हथेली पीली दिखाई दे तो समझ लेना चाहिए कि यह व्यक्ति रोगी है अथवा इसके खून में किसी-न-किसी प्रकार का कोई विकार है। ऐसा व्यक्ति अस्थिर स्वभाव का तथा चिड़चिड़ा होता है एवं संकीर्ण बुद्धि का होने के साथ-साथ कमजोर मस्तिष्क वाला भी कहा जा सकता है।

चिकनी त्वचा- हथेली की त्वचा का भी अपने आप में अत्यंत ही महत्व होता है। जिस व्यक्ति की हथेली की त्वचा चिकनी और मुलायम होती है, वह व्यक्ति सहृदय तथा निरन्तर अपने लक्ष्य की ओर बढ़ने वाला होता है। जीवन में अधिकतर ऐसे ही व्यक्ति सफल होते हैं।

सूखी त्वचा- जिन व्यक्तियों की हथेली की त्वचा या चमड़ी सूखी-सी होती है, वे व्यक्ति सामान्यत: रोगी और अस्थिर प्रकृति वाले होते हैं। वे स्वयं किसी प्रकार का कोई निर्णय नहीं ले पाते और इनको जिस प्रकार की भी सलाह दी जाती है उसी के अनुसार ये कार्य करने लग जाते हैं। इनके कार्यों में किसी प्रकार का कोई सामंजस्य नहीं रहता। मानसिक तथा शारीरिक दोनों ही दृष्टियों से ये सारे लगभग बीमार से ही रहते हैं। जीवन में सफलता इनको बहुत अधिक प्रयत्न करने के बाद ही मिलती है।

रूखी त्वचा- अत्यधिक सूखी तथा रूखी त्वचा व्यक्ति की कमजोरी तथा लीवर की बीमारी को स्पष्ट करती है। ये व्यक्ति संदेहशील प्रकृति के होते हैं। तथा दुर्बल मनोवृत्ति के होने के कारण जीवन में प्राय: असफल ही रहते हैं।

-वास्तु प्रेम कंसलटेंसी
नंदालय, खंडेलवाला कॉम्पलेक्स
एवरसाइन नगर, लिंक रोड
मलाड (वेस्ट), मुम्बई-400064

देवेन्द्रराज मेहता

विकलांगों के नाम समर्पित विलक्षण व्यक्तित्व

वॉरने बफेट ने कहा है कि पैसा, प्रसिद्धि और शक्ति हासिल करने से कई गुणा कठिन है अपनी अच्छाइयों को बनाए रखना। श्री मेहता ने प्रबल जिजीविषा एवं मानवीयता से सराबोर होकर अच्छाई का जो मुकाम हासिल किया है, वह एक विलक्षण उदाहरण है।

■ ललित गर्ग

हाल ही में राजीव गांधी सद्भावना पुरस्कार से प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह के करकमलों से सम्मानित पद्मभूषण श्री देवेन्द्र राज मेहता का सम्पूर्ण जीवन विकलांगों के नाम समर्पित है, जयपुर फुट एवं मेहता एक दूसरे के पर्याय हैं। भगवान महावीर विकलांग सहायता समिति के संस्थापक अध्यक्ष के रूप में वे विकलांगों के जीवन में रोशनी बनकर प्रस्तुत हुए हैं। इस समिति की हर गतिविधि, योजना एवं कार्यक्रम मानवीय संवेदनाओं की प्रयोगशाला में विभिन्न प्रशिक्षणों एवं प्रयोगों से गुजरकर विशिष्टता का वरन करती है, विकास के उच्च शिखरों पर आरूढ़ होती है और अपने पुरुषार्थ, परोपकार एवं सेवा-भावना से समाज एवं राष्ट्र के विकलांगों को ही नहीं बल्कि जन-जन को अभिप्रेरित करती है।

वॉरने बफेट ने कहा है कि पैसा, प्रसिद्धि और शक्ति हासिल करने से कई गुणा कठिन है अपनी अच्छाइयों को बनाए रखना। श्री मेहता ने प्रबल जिजीविषा एवं मानवीयता से सराबोर होकर अच्छाई का जो मुकाम हासिल किया है, वह एक विलक्षण उदाहरण है। उनकी विरलता एवं विलक्षणता के और भी आयाम है, उन्होंने राष्ट्रीय एकता, साम्प्रदायिक सद्भाव, अहिंसा-शांति और भाईचारा बढ़ाने की दिशा में काफी काम किया है। महावीर विकलांग समिति द्वारा उपलब्ध कराया गया कृत्रिम अंग जयपुर फुट के नाम से प्रसिद्ध है। जयपुर फुट पहनकर विकलांग व्यक्ति पूरी तरह से सामान्य जीवन व्यतीत करता है- वह साइकिल चलाने के साथ वृक्षों पर भी काफी आराम से चढ़ सकता है। पहाड़ों की चढ़ाई हो या उबड़-खाबड़ रास्ते- विकलांगों को एक आम-आदमी की तरह जीने का अहसास कराने वाले श्री मेहता की सेवाएं उल्लेखनीय एवं अनुकरणीय हैं। मेहता विकलांगों में आत्मविश्वास का संचार कर उन्हें जिंदगी के पथ पर चलने को प्रेरित करते हैं।

महावीर विकलांग समिति द्वारा विकलांगों को कृत्रिम अंग नि:शुल्क दिये जाते हैं। करीब 12 लाख से भी ज्यादा देश-विदेश के लोग अब तक इससे लाभान्वित हुए हैं। गतदिनों मुझे लॉयंस क्लब नई दिल्ली अलकनंदा द्वारा श्री गणेशलालजी कांठेड़ की स्मृति में आसीन्द (राजस्थान) में लगाये गये विकलांग सहायता

पद्मभूषण श्री देवेन्द्र राज मेहता का सम्पूर्ण जीवन विकलांगों के नाम समर्पित है। जयपुर फुट एवं मेहता एक दूसरे के पर्याय हैं।

शिविर में मेहता की कार्यप्रणाली एवं विकलांग सहायता की नियोजित प्रकिया से रू-ब-रू होने का अवसर मिला। छोटे-से गांव में किस तरह डाक्टरों की टीम एवं विकलांग सहायता के उपकरण पहुंचे एवं विकलांग लोग उनसे लाभान्वित हुए देखकर आश्चर्यमिश्रित खुशी हुई। महावीर विकलांग समिति द्वारा जहां अपेक्षित हो मरीजों को तुरंत सेवा उपलब्ध कराई जाती है। जयपुर में महावीर विकलांग समिति के अस्पताल में किसी भी समय मरीज भर्ती हो सकते हैं। मेहता ने इस संस्था को पूरी तरह से गैर राजनीतिक बनाये रखा है। मेहता ने समाज-सेवा को विज्ञान से जोड़ते हुए स्टेनफोर्ड विश्वविद्यालय से महावीर विकलांग समिति को जोड़ा। इसके परिणामस्वरूप न्यू नी जॉइंट का विकास हुआ जो 'जयपुर नी' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। टाइम पत्रिका ने भी वर्ष 2009 में इसे श्रेष्ठ 50 आविष्कारों में स्थान दिया। महावीर विकलांग समिति एक अंतर्राष्ट्रीय संस्था है। इसके शिविर लैटिन अमेरिका, अफ्रीका आदि बड़े राष्ट्रों सहित पूरे विश्व के 26 देशों में लगाये जाते हैं। हाउ गुड पीपल मेक ऑफ च्वॉइसेस के लेखक रुशवर्थ कीडर कहते हैं कि इच्छा ही सबसे बड़ी योग्यता है। इतिहास में माइकल एंजलो, वॉन गॉग, महात्मा गांधी जैसे कई चरित्र हैं, जो अच्छे भी थे और सफल भी, साथ ही साथ परोपकारी भी। मशहूर लेखक और वक्ता स्कॉट बेकर्न कहते हैं कि ऐसा चरित्र बनिए, तो सोने पर सुहागा अन्यथा बस अच्छे इंसान बनिए। इससे आप ही नहीं, कायनात सुंदर हो जाएगी। मेहता ने अपने कार्यों एवं जीवन-दिशाओं से न केवल अपने अच्छे इंसान होने का उदाहरण प्रस्तुत किया है बल्कि सृष्टि को सुन्दरतम बनाने में भी योगदान दिया है।

मेहता के जीवन पर भगवान महावीर के जीवन और दर्शन का विशिष्ट प्रभाव है, वे जीवदया एवं पशु रक्षा कार्यकर्ता के रूप में भी जाने जाते हैं। पशु रक्षा के लिए भी उन्होंने कई काम किये हैं। कई पशुओं के घरों का निर्माण में सहयोग किया है। इसके अलावा पशुओं की सहायता से जुड़ी कई किताबों का भी प्रकाशन किया है। ●

वास्तु ऊर्जा से भरपूर हो शयनकक्ष

■ डॉ. प्रेम शर्मा

ब्रह्माण्ड में व्याप्त प्राकृतिक ऊर्जा के स्रोत एवं धरातलीय मैग्नेटिक सिस्टम संपूर्ण जगत में एक निश्चित क्रम में प्रवाहित होते हैं। जहां कहीं भी इनकी उपेक्षा अथवा जानकारी के अभाव में निर्माण होते हैं वहां अनिद्रा, बेचैनी, दस्तक देने लगती हैं। वास्तु नियमों का अवलोकन कर शयनकक्ष में सुखद निद्रा का भरपूर लाभ ले सकते हैं।

सुखद निद्रा के सकारात्मक स्रोत

● चुम्बकीय तरंगे उत्तरी ध्रुव से दक्षिणी ध्रुव की ओर संचालित होती हैं। शरीर और मस्तिष्क का चुम्बकीय क्षेत्र भी ऊपर से नीचे की ओर रहता है इसलिए सिराना सदैव दक्षिण की ओर होना चाहिए जो लाभकारी है।

● शयनकक्ष में शांति व सफाई हो। सीलन व किसी प्रकार की गंदगी न हो।

● ऐसा दर्पण जो आपके सामने आता हो उसे सोते समय ढक दें। अन्यथा मानसिक तनाव व चिंता उत्पन्न होगी और बेचैनी, घबराहट के कारण नींद नहीं आएगी।

● शयनकक्ष का आकार 10X12 से 14X16 फुट ऊंचाई 10 फुट से कम न हो।

● दक्षिण-पूर्व शयन से नकारात्मक ऊर्जा का प्रवेश होता है, जो गुस्से को बढ़ाता है जिससे झगड़े बढ़ते हैं। इस हिस्से में सोने से गुप्तांगों के रोग तथा कुमारी कन्याओं को माहवारी से परेशानी व सिरदर्द की समस्याएं होती हैं।

● दरवाजे की तरफ पांव व सिर करके सोना उत्तम नहीं माना जाता है। इससे तरह-तरह की मानसिक परेशानियां व तनाव उत्पन्न होते हैं।

● शयनकक्ष के दरवाजे तिरछे व टेढ़े-मेढे नहीं होने चाहिए। पैर सदैव ठोस दीवार या उत्तर की तरफ होने चाहिए। जिससे दीर्घायु प्राप्त होती है।

● शयनकक्ष में अनावश्यक फर्नीचर व फालतू सामान एकत्र न होने दें।

● उत्तर-पश्चिम में कभी नहीं सोना चाहिए। यद्यपि यह पवित्र व महत्वपूर्ण स्थान है यहां सोने से अनेक बीमारियों से लोग ग्रसित हो जाते हैं। भड़कीले, उत्तेजित चित्रों को न लगाएं।

● पूर्व में अविवाहित व बच्चों का शयनकक्ष होने से उन्हें अच्छी नींद आती है।

● दक्षिण-पश्चिम में गृहस्वामी, परिवार में बड़े व माता-पिता का स्थान होना चाहिए। अन्य कमरों से यह कमरा बड़ा होना चाहिए। बीमार हों तो यह स्थान उपयुक्त नहीं रहेगा।

● नवदंपत्ति का शयनकक्ष उत्तर दिशा में होने से उन्हें अधिक आनंद, सुख व सकारात्मक ऊर्जा मिलेगी। अन्य सदस्यों हेतु यह शयनकक्ष उत्तम नहीं रहता।

● आज के आधुनिक युग में लोग अपने बेड या शयनकक्ष में कई मोबाइल व इलेक्ट्रानिक डिवाइस (विद्युत उपकरणों) को रखकर सोते हैं। मोबाइल सहित अन्य उपकरणों को बंद कर दें अगर संभव हो तो उन्हें शयनकक्ष में न रखें, अनावश्यक सामान से अशांति व तनाव रहेगा जिससे नींद नहीं आएगी और स्वास्थ्य प्रभावित होगा।

अमृतवेला की महिमा

■ जगजीत सिंह

पौ फटने से पूर्व की बेला की महानता अकथ है। गुरुवाणी में इसे 'अमृत वेला' का नाम दिया गया है और इसके अपार महत्व का गुरु ग्रंथ साहिब में विशद प्रतिपादन हुआ है। आध्यात्मिक पुरुषों ने चंचल मन को स्थिर करके उस अनंत से जुड़ने का यह सबसे उपयुक्त समय माना है। इस समय वायुमंडल शांत होता है, सो मन को टिकाने का पूरा सामां मौजूद रहता है। 'जपुजी' में बाबा नानक सवाल-जवाब की शैली में प्रश्न करते हैं कि मुंह से ऐसा कौन-सा वचन बोला जाए कि जिसे सुनकर परमात्मा मुझे प्यार करने लगे- 'मुहो कि बोलणु बोलीऐ जितु सुणि धरे पिआरु।' इसका जवाब अगली पंक्ति में देते हुए फरमाते हैं- 'अमिृतु वेला सचु नाउ वडिआई वीचारु' यानी अमृत वेला में उठकर उसके नाम

का जाप और उसके गुणों का विचार किया जाए। गुरुवाणी कहती है- 'हरि धनु अंमिृतु वेले का बीजिआ भगत खाइ खरच रहे निखुटै नाही'

इस शरीर रूपी धरती में अमृत बेला में बोया गया नाम रूपी बीज इतना पल्लवित-पुष्पित होता है कि भक्तजन उसका फल जितना मर्जी खाएं और खर्च करें, वह कभी खत्म नहीं होता। गुरु अर्जुनदेव तो यहां तक कहते हैं कि जो कोई अमृतवेला में मेरे घर आकर मेरे साथ प्रभु की बातें करता है, वह मेरे मन को भाता है और मैं ऐसे व्यक्ति के चरण धोने के लिए तैयार हूं।

गुरुवाणी के अनुसार पपीहा जब अमृत बेला में सिमरन करता है तो उसकी पुकार सुनी जाती है- 'बाबीहा अंमिृत वेले बोलिआ तां दरि सुणि पुकार।' बाबा नानक का फरमान है कि अमृतवेला में उठ कर नाम ध्यान करने वाले जीवन की बाजी जीत जाते हैं- 'नाउ प्रभातै सबदि धिआइऐ छोडहु दुनी परीता।। प्रणवति नानक दासन दासा जगि हारिआ तिनी जीता।'' शेख फरीद तो यहां तक कहते हैं कि यदि तू अमृत बेला में नहीं जागता, तो समझ ले कि तू जीते जी ही मर गया। 'फरीदा पिछल राति न जागिउहि जीवदड़े मुइउहि।' ●

सुख भी देते हैं शनिदेव

■ विवेक शर्मा

शनि नवग्रहों में सर्वोच्च न्यायाधीश के रूप में इस ब्रह्मांड में विद्यमान हैं। शनि जो कि समय हैं, तभी तो कहते हैं कि हमारा भी वक्त आएगा या जब कोई व्यक्ति किसी दीनहीन को प्रताड़ित करता है तो वह निर्बल व्यक्ति सब कुछ सहता हुआ इतना ही कहता है कि कोई बात नहीं तुम्हें समय बताएगा। शनि का प्रकोप हर व्यक्ति को अपने जीवन में भोगना ही पड़ता है। शनि की साढ़ेसती, ढैय्या तथा शनि की महादशा प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में आती ही है। ज्योतिष मतानुसार, शनि एक राशि में ढाई वर्ष तक विद्यमान रहता है।

जातक की जन्मकुंडली में जिस भाव में चंद्रमा विद्यमान होता है उस भाव से चतुर्थ तथा अष्टम भाव में जब शनि विद्यमान होते हैं तो जातक को शनि अपनी ढैय्या के रूप में प्रभावित करते हैं। इसी प्रकार जब चंद्रमा से द्वादश, चंद्र लग्न या द्वितीय भाव में शनि की गोचरीय स्थिति बनती है तो जातक को शनि अपनी साढ़ेसती के रूप में प्रभावित करते हैं। प्रत्येक व्यक्ति को जीवन में शनि के चक्र का सामना अवश्य रूप से करना ही पड़ता है। इसी प्रकार शनि की महादशा उन्नीस वर्षों तक जातक को प्रभावित करती हैं। शनि अत्यंत सुख तथा अत्यंत कष्ट प्रदान करने वाला ग्रह है। यदि जातक की जन्मकुंडली में शनि की स्थिति शुभ है तो वक्रीय स्थिति में भी शनि के शुभ फल ही प्राप्त होंगे। सभी रुके हुए कार्य संपन्न होंगे। परन्तु यदि जन्म कुंडली में शनि की स्थिति वक्री है तो कार्यों में बाधा एवं देरी संभव वह है। यदि जातक इस समय को ही सही मानते हुए अपने आप को तैयार कर लें अर्थात् अपनी ऊर्जा को विकासशील कार्यों में तथा ज्ञान अर्जित या संचित करने में तथा अपने जिंदगी में जाने-अनजाने में किये गये दुष्कर्मों तथा पापों को याद कर उनका पश्चाताप कर लें तो शनि जातक को जिंदगी के इस भवसागर में अवश्य ही विजेता घोषित करेंगे।

शनि व्यक्ति को अपने तरीके से ही जिंदगी का पाठ पढ़ाते हैं जो कि अत्यंत कठिन तथा कठोर होता है। जिस प्रकार सोना आग में तपने के बाद ही अपने कुंदन रूप में परिलक्षित होता है अर्थात् रूपवान बनता है, उसी प्रकार शनि भी व्यक्ति को उसके कर्मों की भट्ठी में जलाकर उसको कुंदन बनाते हैं। तुला, वृश्चिक, मकर तथा कुंभ राशि के जातकों को शनि शुभ फल ही प्रदान करता है चाहे शनि गोचरीय स्थिति से

किसी भी भाव को प्रभावित क्यों न करे। यदि शनि का किसी भाव में अन्य ग्रह से संबंध या दृष्टि संबंध होने के कारण शुभ परिणाम मिलने में विलम्ब या बाधा आ रही हो तो जातक को शनि शांति महायज्ञ में सम्मिलित होकर शनिदेव की पूजा-अर्चना अवश्य करनी चाहिए। ●

जीवन को सुंदर बनाते हैं संस्कार

■ आचार्यश्री महाश्रमण

खदान से निकलते हुए सोने को देखा, उसमें चमक नहीं थी। वह अग्नि में तपा और चमकदार बन गया। आदमी भी जन्म के साथ महान नहीं बनता। वह भी संस्कारों की अग्नि में तपता है और चमकदार बन जाता है। संस्कार एक अमूल्य तत्व है। संस्कारों की सम्पदा से सम्पन्न जीवन सुन्दर होता है, आकर्षक होता है।

दो शब्द बहुत महत्वपूर्ण है -चरित्र और चेहरा। अनेक लोग ऐसे होते हैं जिनका चेहरा बहुत सुन्दर होता है किंतु उनका चरित्र निर्मल नहीं होता। कुछ लोग ऐसे होते हैं जिनका चरित्र, व्यवहार, विचार आदि निर्मल होते हैं किन्तु चेहरा सुन्दर नहीं होता। चेहरा सुन्दर है या नहीं, खास बात नहीं। खास बात है चरित्र सुन्दर है या नहीं। आभामण्डल पवित्र है या नहीं। अगर आभामण्डल विशुद्ध है तो चेहरा भले कैसा ही क्यों न हो।

दार्शनिक बहुत चिन्तनशील था, जो दार्शनिक होता है वह विचारों में डूबा रहता है। जगत की सच्चाइयों को खोलने में लगा रहता है। चिन्तन-मनन करता रहता है। दार्शनिक अपने पास एक दर्पण रखता और बार-बार उसमें अपना चेहरा देखता रहता।

मित्र ने कहा -भैया! तुम दार्शनिक हो, बड़े संबुद्ध व्यक्ति हो किंतु बार-बार दर्पण देखने वाली तुम्हारी यह वृत्ति अच्छी नहीं लगती। कौन सा तुम्हारा चेहरा सुन्दर है?

दार्शनिक ने बड़ा मर्मस्पर्शी जबाव दिया, कहा—मित्र! मैं इस बात को अच्छी तरह जानता हूँ कि मेरा चेहरा सुन्दर नहीं है, आकर्षक नहीं है। मैं दर्पण इसलिए नहीं देखता कि मेरा चेहरा सुन्दर बना या नहीं? मैं जब-जब दर्पण देखता हूँ तब-तब यह चिन्तन करता हूँ कि मेरा चेहरा तो अच्छा नहीं है किन्तु मुझे अपना आचरण अच्छा बनाना है। मेरा चेहरा गौण हो जाए और आचरण मुख्य बन जाए।

इस दुनिया में अच्छाई भी है और बुराई भी है। हिंसा भी है, अहिंसा भी है। ईमानदारी भी है, बेईमानी भी है, परन्तु तुलना की जाए तो बुराई की अपेक्षा अच्छाई, हिंसा की अपेक्षा अहिंसा, बेईमानी की अपेक्षा ईमानदारी ज्यादा है। आदमी

यह संकल्प और प्रयास करे कि बुराई के पक्ष को कमजोर किया जाए और आचार को उन्नत बनाया जाए। आचार को अच्छा बनाने के लिए जरूरी है कि व्यक्ति के विचार अच्छे बनें। विचार को आचार तक पहुँचाने के लिए संस्कारों का सेतु आवश्यक है। विचार संस्कार के रूप में परिणत हो जाए तो आदमी का आचार वैसा बन सकता है।

साहित्य, दूरदर्शन, प्रवचन-श्रवण, व्यक्तिगत वार्तालाप, वातावरण आदि संस्कार-निर्माण के माध्यम बनते हैं। आदर्श जीवन के लिए प्रारम्भ से ही अच्छे वातावरण और अच्छे संस्कारों की आवश्यकता रहती है। बच्चों में अच्छे संस्कार निर्मित हों। उनमें ईमानदारी, नम्रता और शिष्टता के संस्कार पनप जाएं तो अच्छे जीवन का, अच्छे समाज का और अच्छे राष्ट्र का निर्माण हो सकता है।

बच्चों में यदि प्रारम्भ से ही सुसंस्कार दिएं जाएं तो वे उनके भविष्य को अच्छा बनाने में सशक्त निमित्त बन सकते हैं। जीवन में अच्छे संस्कार आ गए तो समझना चाहिए बहुत बड़ी संपदा प्राप्त हो गई। संस्कारों की सम्पत्ति आ जाती है तो जीवन सुन्दर बन जाता है। और वह दूसरों के लिए प्रेरणाप्रद भी बन सकता है। आदमी ऐसा प्रयास करे कि उसका जीवन संस्कारों की संपदा से सम्पन्न बने।

-प्रस्तुतिः साध्वी सुमतिप्रभा

चेहरे में छिपा भविष्य

● जिस जातक का चेहरा लाल रंग जैसा, चेहरे पर चमक हो तो जातक मान इज्जत पाने वाला, अच्छा मालदार, व्यापारी तथा शोभा पाने वाला होता हैं।

● जिस जातक के होंठ खुरदरे, काले तथा मोटे हों तो जातक धन तथा सुख दोनों का नाश स्वयं ही करता है। पैसे की कदर ऐसे जातक कम ही करते हैं।

● जिस जातक की गर्दन लम्बी तथा मास सहित गोल हो तो जातक राजा के समान मान इज्जत पाने वाला सुखी तथा अच्छा व्यापारी होता है।

● जिस जातक की नसिकाएं सूअर की भांति ऊंची उठी हो तो जातक तेज धार वाले हथियारों यानी चाकू, तलवार के साथ मारा जाने वाला समझना चाहिए।

● जिस जातक की भुजाओं पर मास कम हो यानी की हड्डियां नजर आती हो तो जातक हमेशा दु:ख के साथ अपना जीवन व्यतीत करने वाला होता है। अगर भुजाएं मोटी तथा मास से भरपूर हों तो अपने खानदान के नाम का रोशन करने वाला दीर्घायु होता है।

● जिस जातक की बाजुएं (हाथ रहित) घुटते जितनी लम्बी हो तो जातक हर प्रकार के सुखों को भोगने वाला होता है। ऐसे जातक किसी अच्छे पद पर कार्य करने वाले तथा मान प्रतिष्ठा पाने वाले होते हैं। बाजुएं छोटी और उन पर बाल नजर आते हों तो जातक बुरे कर्म करने वाला, लड़ाई-झगड़ा तथा घर में भी क्लेश करने वाला होता है।

-मुरली कांठेड़

कृष्ण मंत्र और उनके प्रयोग

■ **ब्रजेन्द्र नंदन दास**

यहां हमने श्रीकृष्ण के विभिन्न मंत्र दिए हैं। इन मंत्रों के जाप से सुख-सौभाग्य की प्राप्ति होती है। शुभ प्रभाव बढ़ाने व सुख प्रदान करने में ये मंत्र अत्यंत प्रभावी माने जाते हैं। मंत्र से संबंधित जानकारी यहां प्रस्तुत है-

भगवान श्रीकृष्ण का मूल मंत्र:-

'कृं कृष्णाय नमः'

यह श्रीकृष्ण का मूलमंत्र है। इस मूलमंत्र का जाप अपना सुख चाहने वाले प्रत्येक मनुष्य को प्रातःकाल नित्यक्रिया व स्नानादि के पश्चात एक सौ आठ बार करना चाहिए। ऐसा करने वाले मनुष्य सभी बाधाओं एवं कष्टों से सदैव मुक्त रहते हैं।

सप्तदशाक्षर श्रीकृष्ण महामंत्र

'ऊँ श्रीं नमः श्रीकृष्णाय परिपूर्णतमाय स्वाहा'

यह श्रीकृष्ण का सप्तदशाक्षर महामंत्र है। इस मंत्र का पांच लाख जाप करने से यह मंत्र सिद्ध हो जाता है। जप के समय हवन का दशांश, अभिषेक का दशांश तथा तर्पण का दशांश मार्जन करने का विधान शास्त्रों में वर्णित है। जिस व्यक्ति को यह मंत्र सिद्ध हो जाता है उसे सब कुछ प्राप्त हो जाता है।

सात अक्षरों वाला श्रीकृष्ण मंत्र

'गोवल्लभाय स्वाहा'

इस सात (7) अक्षरों वाले श्रीकृष्ण मंत्र का जाप जो भी साधक करता है उसे संपूर्ण सिद्धियों की प्राप्ति होती है।

आठ अक्षरों वाला श्रीकृष्ण मंत्र

'गोकुल नाथाय नमः'

इस आठ (8) अक्षरों वाले श्रीकृष्ण मंत्र का जो भी साधक जाप करता है उसकी सभी इच्छाएं व अभिलाषाएं पूर्ण होती हैं।

दशाक्षर श्रीकृष्ण मंत्र

'क्लीं ग्लौं क्लीं श्यामलांगाय नमः'

यह दशाक्षर (10) मंत्र श्रीकृष्ण का है। इसका जो भी साधक जाप करता है उसे संपूर्ण सिद्धियों की प्राप्ति होती है।

द्वादशाक्षर श्रीकृष्ण मंत्र

'ऊँ नमो भगवते श्रीगोविन्दाय'

इस कृष्ण द्वादशाक्षर (12) मंत्र का जो भी साधक जाप करता है, उसे सब कुछ प्राप्त हो जाता है।

बाईस अक्षरों वाला श्रीकृष्ण मंत्र

'ऐं क्लीं कृष्णाय ह्रीं गोविंदाय श्रीं गोपीजनवल्लभाय स्वाहा हृसों।'

यह बाईस (22) अक्षरों वाला श्रीकृष्ण का मंत्र है। जो भी साधक इस मंत्र का जाप करता है उसे वागीशत्व की प्राप्ति होती है।

तेईस अक्षरों वाला श्रीकृष्ण मंत्र

'ऊँ श्रीं ह्रीं क्लीं श्रीकृष्णाय गोविंदाय गोपीजन वल्लभाय श्रीं श्रीं श्रीं'

यह तेईस (23) अक्षरों वाला श्रीकृष्ण का मंत्र है। जो भी साधक इस मंत्र का जाप करता है उसकी सभी बाधाएं स्वतः समाप्त हो जाती है।

उन्तीस अक्षरों वाला श्रीकृष्ण मंत्र

'लीलादंड गोपीजनसंसक्तदोर्दण्ड बालरूप मेघश्याम भगवान विष्णो स्वाहा।'

यह उन्तीस (29) अक्षरों वाला श्रीकृष्ण मंत्र है। इस श्रीकृष्ण मंत्र का जो भी साधक एक लाख जप और घी, शक्कर तथा शहद में तिल व अक्षत को मिलाकर होम करते हैं, उन्हें स्थिर लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।

बत्तीस अक्षरों वाला श्रीकृष्ण मंत्र

'नन्दपुत्राय श्यामलांगाय बालवपुषे कृष्णाय गोविन्दाय गोपीजनवल्लभाय स्वाहा।'

यह बत्तीस (32) अक्षरों वाला श्रीकृष्ण मंत्र है। इस श्रीकृष्ण मंत्र का जो भी साधक एक लाख बार जाप करता है तथा पायस, दुग्ध व शक्कर से निर्मित खीर द्वारा दशांश हवन करता है उसकी समस्त मनोकामनाएं पूर्ण होती हैं।

तैंतीस अक्षरों वाला श्रीकृष्ण मंत्रः

'ऊँ कृष्ण कृष्ण महाकृष्ण सर्वज्ञ त्वं प्रसीद मे। रमारवण विद्येश विद्यामाशु प्रयच्छ मे॥'

यह तैंतीस (33) अक्षरों वाला श्रीकृष्ण मंत्र है। इस श्रीकृष्ण मंत्र का जो भी साधक जाप करता है उसे समस्त प्रकार की विद्याएं निःसंदेह प्राप्त होती हैं।

-राष्ट्रीय संपर्क निदेशक, इस्कान
ईस्ट ऑफ कैलाश, नई दिल्ली

THE GLOWING LAMP

Sri Sri Ravishankar

A yogi is one who is proficient in that depth of consciousness which is the basis of all existence.

Once you gain the secret of life then nothing else appears to tempt you. You feel you have attained the highest and you don't worry about more gains.

Our feverishness is about gaining something more - either material or spiritual. That wanting to get something more keeps you on run. But when you are established in this consciousness, in meditation and yoga then you find that no misery or problems touch you. It can't shake you because you are well established with a strong sense of stability and rooted-ness in life.

It is alright to be angry but the anger should not stay in you longer than you draw a line on the surface of water. If your anger is only that much, then it is healthy. But if it lingers on in your head, more than 10 minutes, more than a day, years or months then, there is serious work to be done.

A yogi does not get blown away by gains and losses or by any such untoward things. Like an expert in any field is not perturbed by events that happen around him or her. A yogi walks with ease, embracing any field in life because, life itself, has become proficient and efficient in the skill. This is because you are attending to the root of life which is spirituality.

A yogi does not get blown away by gains and losses or by any such untoward things. Like an expert in any field is not perturbed by events that happen around him or her. A yogi walks with ease, embracing any field in life because, life itself, has become proficient and efficient in the skill. This is because you are attending to the root of life which is spirituality.

If you are well-versed in this, you feel at home in any field you come across because then your intuition works.

You can fix things, that you really don't know, due to the spiritual connection you have. For example, some one who is learning driving with an L board in the car, will notice every stone and is very conscious about every vehicle. Similarly, if you are not a cook then the first time you enter a kitchen, you will look at the cook-book, be anxious about what you will make, how you should make. But imagine a field in which you are proficient, how do you walk in that field? Easily and with confidence. A yogi can consciously can live that state. He/she is centered all the time. Inspite of being with everybody in the world, there is steadiness in the mind, and it is not an effort. When you get centered there is a pleasure that dawns deep within you that can be captured by your intellect, not through the senses. Sometimes, in a relationship before a physical relationship breaks down, the intellectual or emotional relationship breaks down.

Intellectual compatibility comes, stays for sometime and starts disappearing. When you make a new friend then there is lot of jokes, lot of fun, lot of enthusiasm, because the intellect is fully engaging itself. After a while, you seem to know the person, then you stop having fun; then you feel, that somewhere you are retrieving.

Then you find "Oh life is boredom". That type of intellectual pleasure which you are seeking is going to come when you are reposing and steady in the being. You are the source of joy. But you are looking at others and trying to get joy out of them. When you know that you are the source of joy, you don't expect someone to give you joy; you will start giving joy. Yoga comes by reposing in the self and relaxing. And that gives you so much joy, extreme sense of happiness. The mind of such a person is like a lamp. In a place where there is no wind, the flame is steady and spreads light equally in all directions. You might have had this experience, at some point of your life when your mind is absolutely like a laser beam, so focused, so solid, your intentions get manifested.

Base your life on wisdom, on yoga. Something that is non-changing. There is a path in you that does not change or die. Hook on to that which does not change within you and become stable. ●

EXTRASENSORY CONSCIOUSNESS

Acharya Mahaprajna

The world we live in constitutes an alliance of sensuous consciousness and concrete matter. Our knowledge is contained within the circumference of our senses and all material substances subsist within the periphery of speech, form, smell, taste and touch.

Five senses with their objects these constitute our small world. In fact, this world is not so small, it is very extensive. But the power of the senses is very limited. They apprehend only gross material objects. Atoms are concrete enough, yet the senses cannot apprehend them. Innumerable atoms unite to form a mass which is yet too subtle for the senses to apprehend. They can apprehend only those substances which are made up of an infinite number of atoms and have developed gross concreteness. Our senses cannot even apprehend the whole of the corporeal world. So the question of their apprehending the incorporeal, intangible world does not arise.

The incorporeal elements are beyond sound, smell, taste and touch. Their atoms are different from those of the material world. Thus the effort of one who seeks to know the incorporeal world through the senses will not be successful. The starting point of religion is extrasensory consciousness. One endowed with only sensory perception cannot appreciate it. Only that person may be said to be religious who is able to appraise both the concrete and the abstract. From the transcendental aspect, a man stands alone. From the empirical aspect, each man lives in co-operation with others, each providing assurance and refuge to others.

The empirical truths are directly linked with thought whereas ultimate truths pertain to spiritual knowledge which lies beyond thought. That marks the dividing line between thinking and non-thinking, between the concrete and the abstract. The Ultimate, too, descends upon the ground of thought, but it still maintains in its abstract form. The sphere of both the concrete and the abstract is very extensive, but to those living within the periphery of sensuous knowledge, the field of the abstract does not appear to be large enough.

Consequently, they do not attach as much importance to abstract thinking. The sun of spirituality is generally overcast with clouds of selfishness. For those moving from darkness to light, and for those wishing to move in that direction, it is essential to proceed from the concrete to the abstract. ●

TOMORROW IS UNCERTAIN

Amrit Sadhana

People plan for tomorrow, and live this moment in the hope that tomorrow will be better, it will bring pleasures and blessings.

But nobody has been able to peep into the age-old illusion of "tomorrow". For when this "tomorrow" comes , it always comes as today. Nobody has been able to meet this myth called tomorrow.

This wisdom is encapsulated in the following Chinese story. The Chinese are the great storytellers and condense the experience of life in a small anecdote or a story. The truth reaches straight home because the story is a painting in words. It depicts the truth effectively.

Osho loves to tell this story, as he is also a master storyteller.

A king became very angry with his prime minister for certain reasons, and he sentenced him to death. It was the custom of that country that whenever a person was going to be crucified, the king himself used to come and see him. So the king came in the morning on his beautiful horse. The king came in, and the prime minister started crying.

He said to the king, "When I was young I lived with an alchemist. I learned from him the art of teaching a horse to fly. But only a certain kind of horse can be taught. I have been looking for that special kind of horse my whole life and today you have brought the horse! I am crying because my long apprenticeship with the alchemist, has gone in vain!"

The king became very enchanted with the idea that the horse could fly. If it were possible then he would be the only king in the whole world whose horse could fly! He said: "How long will it take to teach the horse?" The man said: "Only one year."

In reply, the king said: "Okay, I give you one year! If you can teach the horse to fly, not only will you be released from this death sentence but you will also get half my kingdom. And if the horse cannot fly, after one year you will be killed."

The prime minister took the horse and went home. His family asked, "What has happened? Have you escaped from the prison?" The prime minister told the whole story. The wife said: "I know that this is false. You don't know any art and you have never been an apprentice to any alchemist."

The prime minister said: "Anything can happen in one year. The king may die, I may die, or the horse may learn to fly! Everything is possible."

And the end of the story is unbelievable: all three of them died in one year! ●

जब हिरण्याक्ष ने इन्द्र को स्तंभित किया

■ किरण सिन्हा

एक बार पर्वत पृथ्वी को छोड़कर असुरों के निवास-स्थान पश्चिम दिशा में जाकर वहां के विशाल सरोवर में हाथी की तरह गोते लगाने तथा नहाने लगे। उस समय पर्वतों ने असुरों से कहा- ''देवताओं को तीनों लोकों का आधिपत्य प्राप्त हुआ है अर्थात् वे छोटे होकर भी राज्य के भागी हो गये और दैत्य बड़े होकर भी उसे न पा सके।''

यह सुनकर सारे असुर युद्ध के लिए भारी तैयारी करने लगे। वे अपनी क्रूर बुद्धि का सहारा लेकर पृथ्वी को हड़पने के प्रयत्न में लग गए। उन भयंकर पराक्रमी असुरों ने सब प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों का संग्रह किया। उन्होंने चक्र, अशनि, खड्ग, भुशुण्डि, धनुष, प्रास, पाश, शक्ति, मूसल, गदा आदि आयुध ले लिये। कोई कवच धारण करके युद्ध के लिए तैयार हो गया। कोई मतवाले हाथियों पर जा बैठा तो कोई युद्ध के लिए उद्यत हो घोड़े जुते रथों पर आरूढ़ हुआ। दूसरे महान असुर घोड़ों पर सवार हो गये। बहुत सारे असुर ऊंटों, गैंडों, भैंसों और गदहों पर बैठे थे। कुछ अपने बाहुबल का भरोसा कर पैदल ही युद्ध के लिए तैयार थे।

सभी असुर हाथों में दास्ताने बांधे एवं कवच पहने हर्ष में भरकर हिरण्याक्ष के नेतृत्व में देवताओं से युद्ध करने के लिए चल पड़े।

दैत्यों के इस युद्धविषयक उद्योग का पता पाकर इंद्र आदि देवता भी युद्ध के लिए बड़ी भारी तैयारी करने लगे। उन लोगों ने भी पूरी सावधानी बरत कर विशाल चतुरंगिणी सेना के साथ गोधाचर्म के बने हुए दस्ताने पहने, बाणों से भरे तरकस बांधे और भयंकर आयुध धारण किये। फिर वे अपने-अपने दल में खड़े हो गये और ऐरावत पर आरूढ़ देवराज इंद्र के पीछे-पीछे चलने लगे।

वाद्यों के घोर शब्द और भेरियों के गंभीर घोष के साथ हिरण्याक्ष ने देवराज इंद्र पर धावा बोल दिया। उसने तीखे फरसों, तलवारों, गदाओं, तोमरों, शक्तियों, मुसलों और पट्टिशों से देवराज इंद्र को आच्छादित कर दिया। उसके अस्त्र के बल और वेग से आग की लपटों से युक्त, अत्यंत दारुण, घोर और महान वेगशाली बाण-वर्षा इंद्र के ऊपर होने लगी। बाकी बलवान दैत्य सफेद धारवाले फरसों, लोहे के परिघों (भाला, बर्छी आदि), तलवारों, क्षेपणीयों (गोफन नामक यंत्रविशेष जिसके द्वारा गोली या कंकड़ आदि को दूर तक फेंका जाता है), मुद्गरों, तेजोयुक्त एवं पर्वत सदृश चट्टानों, महान घात करने वाली भारी शतघ्नियों (तोपों), जूए के समान आकार वाले अस्त्रों, निर्मुक्त यंत्रों तथा विदीर्ण करने वाले अर्गलों से इन्द्र आदि संपूर्ण देवताओं को मारने और घायल करने लगे।

एक ओर दानवराज हिरण्याक्ष की सेना थी तो दूसरी ओर देवताओं की विशाल वाहिनी। दोनों ओर से परस्पर बाणों की वर्षा हो रही थी। उस समय युद्ध के बादल छाये हुए जान पड़ते थे। हिरण्याक्ष भी महातेजस्वी और बलवान था। वह कुपित होकर उसी तरह आगे बढ़ रहा था जैसे पूर्णिमा के दिन समुद्र बढ़ता है।

हिरण्याक्ष को अस्त्र-शस्त्र लेकर युद्ध करने के लिए तैयार देख सब देवता तत्काल आतंकित हो गए। दैत्यों के आगे खड़ा हुआ असुर हिरण्याक्ष प्रलय काल में सामने स्थित हुए भयंकर मृत्युदेवता के समान प्रतीत होता था। इंद्रादि सब देवता उस समय उसको देखकर अत्यंत व्यथित हो उठे। हिरण्याक्ष को आते देख सभी देवताओं का चित्त उद्विग्न हो गया। वे हाथ में धनुष लेकर और इंद्र को आगे करके युद्ध के मुहाने पर खड़े हो गए।

फिर तो देवता और दैत्य एक-दूसरे को गिराते हुए टूट पड़े। युद्ध की इच्छा वाले अन्य वीरों ने अपनी भुजाओं द्वारा शत्रुपक्ष के सैनिकों की दोनों बाहें तोड़ डालीं। कितनों के अंग गदाओं की चोट से भंग हो गये, बाणों के प्रहार से उनकी छाती में भयानक पीड़ा होने लगी। कितने ही योद्धा युद्धस्थल से अलग जा गिरते थे तथा दूसरे सैनिक भी मारे जाते थे। किन्हीं ने रथ तोड़ डाले, कितने ही शत्रुपक्ष के रथों से कुचल गये तथा दूसरे योद्धा चारों ओर से इस तरह घिर गये कि रथ से हिल ही न सके।

एक ओर दानवराज हिरण्याक्ष की सेना थी तो दूसरी ओर देवताओं की विशाल वाहिनी। दोनों ओर से परस्पर बाणों की वर्षा हो रही थी। उस समय युद्ध के बादल छाये हुए जान पड़ते थे। हिरण्याक्ष भी महातेजस्वी और बलवान था। वह कुपित होकर उसी तरह आगे बढ़ रहा था जैसे पूर्णिमा के दिन समुद्र बढ़ता है। अत्यधिक क्रोध के कारण उसके मुख से सहसा आग की लपटें निकलने लगीं। उसके निकट से आग और धूम लिये हुए प्रचंड वायु चलने लगी। उसने नाना प्रकार के शस्त्र-समूहों, धनुषों और परिघों से सारे आकाश को ढक लिया मानो उठे हुए पर्वतों से आकाश अवरुद्ध हो गया हो।

इस युद्ध में बहुत-से शस्त्रों और तलवारों से देवताओं के सिर और वक्ष:स्थल छिन्न-भिन्न हो गये थे। वे हिरण्याक्ष द्वारा इतने पीड़ित किये गये कि उनमें चलने-फिरने की भी शक्ति नहीं रह गयी। हिरण्याक्ष ने सभी देवताओं को इतना भयभीत कर दिया कि वे अचेत-से हो गये और यत्नशील होने पर भी कोई यत्न न कर सके। उसने अपने अस्त्र द्वारा ऐरावत की पीठ पर बैठे इंद्र को स्तंभित (जड़ बना देना, निश्चेष्ट या सुन्न कर देना) कर दिया जिससे वे भय के कारण भागने में भी असमर्थ हो गए।

इस प्रकार, समस्त देवताओं को पूर्णरूप से पराजित करके और देवेश्वर इंद्र को भी हिलने-डुलने में असमर्थ बनाकर हिरण्याक्ष संपूर्ण संसार को अपने अधीन समझने लगा।

जब देवराज इंद्र निश्चेष्ट और समस्त देवता पराजित हो गये तब भगवान विष्णु ने स्वयं ही हिरण्याक्ष के वध का विचार किया और वे वाराह रूप में प्रकट हुए।

भगवान वाराह ने अपने उत्तम एवं पुरातन शंख को मुख से बजाते हुए बहुत-से दैत्यों के प्राण हर लिए।

तब हिरण्याक्ष ने पूछा-'यह कौन है?' और क्रोधपूर्वक वाराह की ओर देखा। वाराहरूप धारी भगवान हाथ में शंख और चक्र लिये वहां खड़े थे। हिरण्याक्ष ने अपने असुर साथियों के साथ भगवान वाराह पर धावा किया, लेकिन वे पर्वत के समान अचल रहे। तब हिरण्याक्ष ने वाराह की छाती पर एक अत्यंत प्रज्वलित शक्ति का प्रहार किया। लेकिन, उस शक्ति को वाराह ने हुंकारमात्र से पृथ्वी पर गिरा दिया और अपना सूर्य के समान तेजस्वी चक्र घुमा कर दानवराज हिरण्याक्ष के सिर पर दे मारा। फिर तो खड़े-खड़े ही हिरण्याक्ष का सिर पृथ्वी पर गिर पड़ा। हिरण्याक्ष के मरते ही शेष दैत्य दसों दिशाओं में भाग खड़े हुए।

समस्त दैत्यों को भगा कर भगवान ने वहां स्तंभित इंद्र आदि देवताओं को मुक्त किया। ●

समृद्ध सुखी परिवार

सुखी और समृद्ध परिवार का मुखपत्र

विज्ञापन और सदस्य बनाने हेतु प्रतिनिधि संपर्क करें

पत्रिका के स्वयं ग्राहक बनें, परिचितों, मित्रों को ग्राहक बनने के लिए प्रेरित करें

कवर अंतिम पृष्ठ	25,000
कवर द्वितीय/तृतीय	20,000
भीतरी रंगीन पृष्ठ	10,000

वार्षिक शुल्क
300 रुपये
दस वर्ष
2100 रुपये
आजीवन
3100 रुपये

विज्ञापन देकर अपने प्रतिष्ठान को जन-जन तक पहुंचाएं

कृपया निम्नलिखित विवरण के अनुसार मुझे 'समृद्ध सुखी परिवार' सदस्यता सूची में शामिल करें:

नाम.....

पता.....

.....

फोन..... ई-मेल.....

सदस्यता अवधि.....राशि रुपए..... द्वारा मनीऑर्डर/बैंक ड्राफ्ट संख्या.....

दिनांक..... .....

आवेदक के हस्ताक्षर

नोट: सदस्यता शुल्क की राशि का चेक/ड्राफ्ट सुखी परिवार फाउंडेशन, नई दिल्ली के नाम से बनाएं या एक्सिस बैंक खाता संख्या 119010100184519 में सीधा जमा करवाएं। मनी ट्रान्सफर के लिए IFS CODE UTIB0000119 का प्रयोग करें।

सुखी परिवार फाउंडेशन

ई-253, सरस्वती कुंज अपार्टमेंट, 25 आई. पी. एक्सटेंशन, पटपड़गंज, दिल्ली-110092

फोन: +91-11-26782036, 26782037, मोबाइल: 09811051133

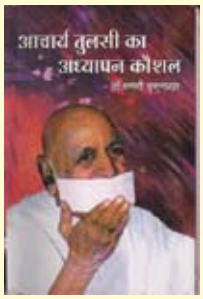

आचार्य तुलसी का अध्यापन कौशल

■ ललित गर्ग

आचार्य तुलसी ने अपने प्रत्येक क्षण को जिस चैतन्य एवं प्रकाश के साथ जीया है, वह भारतीय ऋषि परम्परा के इतिहास का महत्वपूर्ण अध्याय है। वे एक दार्शनिक, कवि, विचारक, समाज-सुधारक एवं राष्ट्रसंत होने के साथ-साथ एक सफल शिक्षक भी थे। उनका शिक्षा एवं अध्यापन के क्षेत्र में उत्कृष्ट स्थान था। उनके द्वारा प्रदत्त शिक्षा जीविका की नहीं, जीवन-निर्माण की शिक्षा थी। उनके शिक्षा विषयक घटनाओं एवं विचारों को एकत्र कर डॉ. समणी कुसुमप्रज्ञा ने 'आचार्य तुलसी का अध्यापन कौशल' नामक ग्रंथ का सृजन किया है। आचार्य तुलसी की क्रांतिकारी आधुनिक शिक्षाशास्त्री के रूप में रोचक एवं प्रभावी ढंग से प्रस्तुति इस ग्रंथ में की गई है जो लेखिका के श्रम साध्यता के साथ-साथ उनकी विलक्षणता को उजागर करता है।

अड़तालिस आलेखों में लेखिका ने न केवल आचार्य तुलसी के समग्र शैक्षणिक व्यक्तित्व को उजागर किया है बल्कि शिक्षा और शिक्षक की समग्र विवेचना भी की है। अध्यापक का महत्व, अध्यापन का उद्देश्य, अध्यापक के व्यक्तित्व का वैशिष्ट्य, प्रेरणा देने की कला, व्यक्तित्व निर्माण की कला, शिक्षण में विनोदप्रियता, प्रोत्साहन और प्रतिकार, समय प्रबंधन की प्रेरणा, अनुशासन का महत्व और अध्यापन के साथ जीवन मूल्यों का समावेश जैसे विषयों पर सारगर्भित, उपयोगी एवं जीवन-निर्माणकारी सामग्री को प्रस्तुत किया है। आचार्य तुलसी किसी विद्यालय, महाविद्यालय या विश्वविद्यालय के अध्यापक नहीं थे लेकिन शिक्षा के ये तीनों संस्थान उनके साथ हर समय चलते थे। आधुनिक शिक्षाशास्त्री इवान इलिच आदि ने जिस विद्यालयमुक्त नवीन शिक्षा पद्धति 'नवाचार' की खोज की उसके आचार्य तुलसी जीवंत उदाहरण थे। उनके पास पढ़नेवाले विद्यार्थी ज्ञान और आचार में उच्च शिक्षा प्राप्त विद्यार्थियों से कई गुना आगे हैं। आचार्य तुलसी के अध्यापन कौशल से निखरी यूं तो हजारों-लाखों प्रतिभाएं हैं लेकिन आचार्य महाप्रज्ञ, आचार्य महाश्रमण और साध्वीप्रमुखा कनकप्रभा इसके विलक्षण उदाहरण थे।

समणी कुसुमप्रज्ञा आचार्य तुलसी के साहित्य पर व्यापक कार्य किया है जिनमें उनके द्वारा संपादित 'एक बूंद एक सागर' ग्रंथमाला, 'आचार्य तुलसी साहित्य : एक पर्यवेक्षण', 'पौरुष के प्रतिमान', 'आचार्य तुलसी की साहित्य संपदा', 'साधना के शलाका पुरुष : गुरुदेव तुलसी', 'आचार्य तुलसी का काव्य वैभव' ऐसे ग्रंथ हैं जो हिन्दी साहित्य जगत में अपना एक महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। प्रस्तुत ग्रंथ के माध्यम से शिक्षक वर्ग ही नहीं अपितु जन-सामान्य भी शिक्षक और शिक्षा के वास्तविक स्वरूप से परिचित हो सकेंगे। अपनी साहित्यिक प्रतिभा के बल पर लेखिका ने ग्रंथ को रोचक ही नहीं, प्रेरक भी बनाया है जो समाज, राष्ट्र, धर्म, शिक्षा एवं संस्कृति आदि से संबंधित अनेक व्यावहारिक जिज्ञासाओं/समस्याओं का सटीक समाधान भी है।

पुस्तक : आचार्य तुलसी का अध्यापन कौशल
लेखक : डॉ. समणी कुसुम प्रज्ञा
प्राकशक : जैन विश्वभारती, पो. लाडनूं, जिला नागौर (राजस्थान)
मूल्य : रु. 80, पृष्ठ सं.: 298

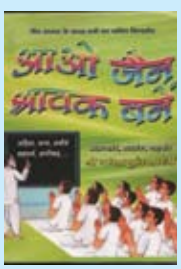

आओ जैन श्रावक बनें

■ बरुण कुमार सिंह

प्रस्तुत कृति में श्रावक का अर्थ, अभिप्राय, उसके लक्षण-गुण तथा श्रावक का ज्ञान क्या, दर्शन क्या और उसका देश चारित्र क्या इन सभी तथ्यों का समग्र रूप से विवेचन किया गया है। साथ ही श्रावक के व्रत और उनसे लगने वाले अतिचारों को भी सचित्र समझाया गया है। यह कृति उन्हीं भावनाओं का परिदर्शन है। लेखक गणेश मुनिजी ने सरल एवं रोचक भाषा में सफल जीवन के लिए आवश्यक बारह व्रतों की जानकारी दी है जिससे श्रावक को लाभ हो सके। इसका एकमात्र हल जैन श्रावकों में निहित बारह व्रतों की परिपालना में है। ये व्रत जैन ही नहीं बल्कि जन-जन में परिव्याप्त हो तो पूरा विश्व समस्या विहीन बन सकता है।

'आओ जैन श्रावक बनें' कृति में गणेश मुनिजी ने बड़े ही सरल शब्दों में श्रावक के उत्तम गुण और व्यवहार की मनोरम रूप में की है। श्रावक यह जानकारी स्थायी रूप से प्राप्त कर सकें, इसे हेतु पुस्तक आर्ट पेपर पर बहुरंगी, अर्थपरक तथा सार्थक चित्रों के साथ इसको आकर्षक बनाया है ताकि पठन एवं कथन के साथ-साथ प्रत्येक पृष्ठ चित्रमय दर्शन से आशय की ओर अधिक हृदयग्राही बना सके। इसके साथ प्रत्येक पृष्ठ पर उससे संबंधित भावचित्र से यह पुस्तक प्रत्येक के लिए पठनीय, संग्रहणीय और मननीय बन गई है।

पुस्तक : आओ जैन श्रावक बनें
लेखक : श्री गणेश मुनि शास्त्री
प्राकशक : श्री अमर जैन साहित्य संस्थान गणेश विहार, सैक्टर-11, हिरण मगरी उदयपुर-313002 (राजस्थान)
मूल्य : रु. 300, पृष्ठ सं.: 102

पहचान

■ बरुण कुमार सिंह

प्राचीनकाल से ही शिक्षाप्रद बातें जन-जन तक पहुंचाने के लिए कथा-कहानियों की रचनाएं होती आ रही है। वर्तमान युग में लघुकथा और कहानियों की बहुत उपयोगिता है। लघुकथाओं की यह विशेषता होती है कि वे अपने छोटे आकार से ही पाठकों को भीतर तक झकझोरने का सामर्थ रखती है। 'पहचान' लघुकथा में लघुकथाकार राधेश्याम पाठक 'उत्तम' ने पारिवारिक विघटन, क्षरित होती जा रही संवेदनाएं, भ्रष्टाचार, जातिप्रथा, घोटाले, अंधविश्वास और राजनीति जैसे विषयों पर अपनी कलम चलायी है। कुछ प्रमुख लघुकथा इस प्रकार हैं- 'सज्जन', 'आक्रोश', 'लाठी', 'घर का भेदी', 'मनुहार', 'मुंहजोर', 'मोती की शहादत', 'घर में बुजुर्ग है', मंगेतर', 'मैं कहां रहूंगा', 'पानी को पवित्र बनाईए', 'चूहा, बिल्ली और घंटी', 'रोकना बस में नहीं', 'हत्या और राजनीति', 'शर्मिन्दा', 'कल की कल देखेंगे', 'आंख का पानी', 'मां मरती नहीं है', 'भूख और प्यास', 'कुत्ते का न्याय', 'सृष्टि के अपराधी', 'परमेश्वर अनुपस्थित है' आदि।

जहां तक इस लघुकथा संग्रह में संग्रहित लघुकथाओं का प्रश्न है तो सीमित विषयों के बावजूद लघु कथाकार अपनी चैतन्य दृष्टि से छोटी-छोटी घटनाओं, छोटे-बड़े दृश्यों में जीवन के धड़कते स्वर को न केवल सुनता है बल्कि उसे समझकर लघुकथा में ढाल भी देता है। निःसंदेह यह लघुकथा पाठकों को चिंतन के लिए प्रेरित करेगी।

पुस्तक : पहचान
लेखक : राधेश्याम पाठक 'उत्तम'
प्राकशक : शब्द प्रवाह साहित्य मंच ए-99, व्ही. डी. मार्केट, उज्जैन-456006 (म.प्र.)
मूल्य : रु. 150, पृष्ठ सं.: 108

कसौलीः सेहतमंद आबोहवा का स्थल

कसौली कुसुमावली का अपभ्रंश है, जिसका अर्थ है फूलों की कतार। आप किसी भी मौसम में कसौली चले जाएं वहां की फिजां में फूलों की सुगंध जरूर महसूस होगी।

■ पुखराज सेठिया

रोज की भागमभाग और एक जैसी दिनचर्या से ऊबकर कभी-कभी मन चाहता है कि ऐसी जगह पर उड़ चलें जहां कुछ लम्हे सुकून के बीत सकें। हालांकि यह ख्वाब, हमेशा के लिए तो हकीकत में नहीं बदल सकता, लेकिन प्रकृति ने हमें कुछ ऐसे सुरम्य स्थल प्रदान किए हैं, जहां जाकर मनुष्य वहां की ताजा आबोहवा में खुद को भूल सकता है। प्रकृति का एक ऐसा ही वरदान है कसौली।

कसौली कुसुमावली का अपभ्रंश है, जिसका अर्थ है फूलों की कतार। आप किसी भी मौसम में कसौली चले जाएं वहां की फिजां में फूलों की सुगंध जरूर महसूस होगी। यहां पर जीनिया, डेजी, मॉर्निंग ग्लोरी तथा डहेलिया के फूलों के साथ-साथ जंगली फूलों की निराली छटा भी देखने को मिलती है और चीड़ एवं देवदार के विशालकाय वृक्षों को देखकर ऐसा लगता है मानो कोई सजग प्रहरी यहां की रखवाली कर रहा हो।

यदि आप कसौली जाएं तो पहली बार ऐसा प्रतीत होता है कि मानो शिमला पहुंच गये हैं। परन्तु दोनों स्थानों में काफी अंतर है। शिमला की भागमभाग की अपेक्षा कसौली काफी शांत है तथा शिमला की तुलना में काफी सस्ता व साफ-सुथरा भी है। भारत में कसौली ही एकमात्र ऐसा पर्वतीय स्थान है, जो मैदानी इलाकों से एकदम करीब है। कालका से यह मात्र 35 कि.मी. की दूरी पर है तथा चंडीगढ़ व कसौली के बीच की दूरी भी महज 67 कि.मी. है।

कालका पूरे देश से रेलमार्ग से जुड़ा हुआ है तथा कालका-शिमला रेलमार्ग को तो दुनिया के अनूठे रेलमार्गों में गिना जाता है। कालका से रेल यात्रा की शुरुआत के बाद केवल 8 किलोमीटर के फासले पर ही हरियाणा का प्रसिद्ध पिंजौर गार्डन पड़ता है। मुगल शैली में बने इस गार्डन की विहंगम छटा देखते ही बनती है। पिंजौर से आगे बढ़ने पर कसौली के शीर्षतम स्थान मंकी प्वाइंट पर स्थित माइक्रोवेव टावर नजर आता है।

यदि कसौली के इतिहास पर नजर डालें तो उसकी गरिमा का एहसास होता है। यहां भी स्वतंत्रता संग्राम की गूंज सुनी गई थी। 20 अप्रैल 1857 को कसौली में स्थानीय सैनिकों ने एक पुलिस चौकी को जलाकर बगावत का बिगुल बजा दिया था। अंग्रेजों के खिलाफ यहां से शुरू हुई बगावत ने सपाटू, डगशई और जतोग में भी अपना असर दिखाया। मई 1857 को जब बगावत की खबर शिमला में बैठे ब्रिटिश कमांडर को लगी तो उन्होंने जतोग, सपाटू और डगशई के सैनिकों को अम्बाला चलने का आदेश दिया, किन्तु स्थानीय सेना ने न केवल आदेश को मानने से इनकार कर दिया, बल्कि जतोग की नसीरी सेना के खजाने पर भी कब्जा कर लिया। कसौली में तो स्थानीय सैनिकों ने अंग्रेज फौज पर हमला ही कर दिया तथा अंग्रेज छावनी के कैप्टन बैलकान सहित सभी सैनिक वहां से भाग खड़े हुए।

कसौली का माल रोड स्थित बाजार पर्यटकों के लिए आकर्षण का मुख्य केन्द्र है। यह हमेशा पर्यटकों की आवाजाही से भरा रहता है। इस बाजार में ऊनी कपड़े तथा लकड़ी की तरह-तरह की आकर्षक सजावटी वस्तुएं सस्ते दामों पर मिलती हैं।

अगस्त-सितम्बर के महीने में इसके आस-पास की पहाड़ियां सैकड़ों तरह की प्रजातियों के रंग-बिरंगे पुष्पों से भर जाती हैं और उनकी सुगंध दूर-दूर तक अपना मादक प्रभाव छोड़ती है। इन पहाड़ियों में दूर-दूर तक फैली वादियां पर्यटकों का मन मोह लेती हैं। यहां एक केन्द्रीय अनुसंधान संस्थान भी है।

कसौली से कुछ दूरी पर स्थित मंकी प्वाइंट भी देखने योग्य स्थल है। इसे हनुमान मंदिर भी कहते हैं। हनुमानजी के बायें पैर की आकृति में स्थित मंदिर कसौली के मुख्य आकर्षण के केन्द्रों में से एक है। कहा जाता है कि हनुमानजी जब संजीवनी बूटी लेकर आ रहे थे तो इस पहाड़ पर उनका बायां पैर लग गया था। यद्यपि यह मंदिर काफी ऊंचाई पर स्थित है और यहां पहुंचने के लिए पैदल मार्ग ही अपनाना पड़ता है, लेकिन उसके बावजूद यहां प्रतिदिन सैकड़ों श्रद्धालु पहुंचते हैं। इस स्थान से दूर-दूर तक फैली विस्तृत पहाड़ियों के दर्शन किए जा सकते हैं। अगस्त-सितम्बर के महीने में यहां अत्यधिक कोहरा छा जाता है।

-एम-25, लाजपत नगर-2
नई दिल्ली-110024

लक्ष्य के प्रति समर्पण से जुटें

■ अशोक एस. कोठारी

मनुष्य ने जितना विकास किया है, सफलता अर्जित की है तो सिर्फ लक्ष्य बनाकर। सुव्यवस्थित लक्ष्यों एवं उद्देश्यों के बिना न तो कोई बड़ा कार्य किया जा सकता है और न ही कोई विशेष सफलता अर्जित की जा सकती है। चाहे चिकित्सा के क्षेत्र में हो, तकनीकी के क्षेत्र में हो या अन्य किसी भी क्षेत्र में हो जितने आविष्कार या नये-नये रहस्योद्घाटन हुए हैं वे निश्चित लक्ष्यों के आधार पर हुए हैं। चाहे व्यवसाय का क्षेत्र हो, चाहे सामाजिक, धार्मिक एवं राजनीतिक क्षेत्र हो। खुशहाल पारिवारिक जीवन हो या सफल सामाजिक जीवन, सफलता तभी मिलती है जब हासिल करने के लिए टारगेट बनाया जाता है तथा कमिटमेंट हो।

जब तक लक्ष्य स्पष्ट नहीं बनाया जाता है, तब तक न तो कुछ हासिल होता है और न ही कदम आगे बढ़ाये जा सकते हैं। लक्ष्यों के बिना व्यक्ति सिर्फ इधर-उधर भटकता रहता है, लड़खड़ाता रहता है और वह कभी भी चिंतन नहीं कर पाता है कि उसे कहां, कब और कैसे पहुंचना है तथा उसकी मंजिल क्या है।

सफलता के लिए लक्ष्य उतने ही जरूरी है, जितना जीने के लिए श्वांस। हम सफल एवं महान व्यक्तियों का इतिहास पढ़कर देखें, हमने आचार्य श्रीमद् विजय वल्लभ सूरीजी आचार्य श्रीमद् विजय इन्द्रदिन्न सूरीजी को देखा नहीं, लेकिन उनके अवदानों के बारे में सुना है एवं वर्तमान में आचार्य श्रीमद् विजय नित्यानन्द सूरीजी को देख रहे हैं, गणि राजेन्द्र विजयजी को देख रहे हैं, अगर वे सफल हुए हैं तो निश्चित लक्ष्यों के आधार पर।

आज सुखी परिवार फाउण्डेशन दिन-प्रतिदिन नई-नई ऊंचाइयों को प्राप्त कर रहा है, इसका एक प्रमुख कारण है तो स्पष्ट चिंतन, लक्ष्य तथा समर्पण भाव। परन्तु लक्ष्य ऐसे भी न बनाये जायें जिनको प्राप्त नहीं किया जा सकता है। दोस्तों हमें लक्ष्य निर्धारित करने हैं, परन्तु लक्ष्य ऐसे भी न हो कि सपने बनकर वहीं के वहीं रह जायें। लक्ष्य छोटे-छोटे हों तथा सफलता हासिल करने के लिए उस कार्य की पूरी योजना भी बन जानी चाहिए ताकि सफलता अर्जित की जा सके। लक्ष्य बन जाये लेकिन दिशा सही न हो, दृढ़ संकल्प शक्ति न हो, उसके प्रति पूर्ण समर्पण न हो, अनुशासित ढंग से प्रयास न हो तथा स्पष्ट

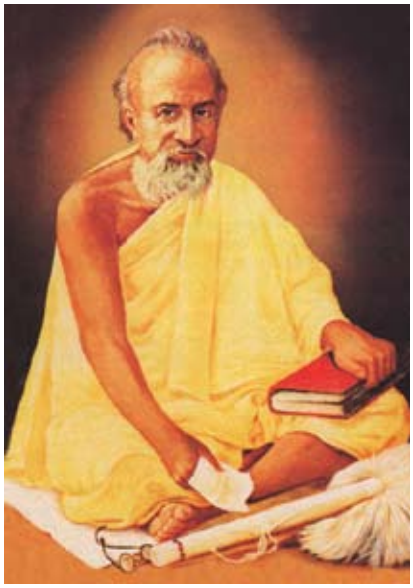

डैड लाइन न हो तो भी उन लक्ष्यों को प्राप्त नहीं किया जा सकता है और वे केवल बातें ही रह जाती हैं।

हम सबसे पहले इस बात पर ध्यान दें कि हम सुखी परिवार फाउण्डेशन जैसे मानवतावादी एवं जनकल्याणकारी उपक्रम के साथ जुड़े हुए हैं तथा इसके माध्यम से मानवता एवं आदिवासी समाज की सेवा करने का सुअवसर भी हमें मिला है, हम बहुत गौरवशाली हैं। हमें अपने स्वयं के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करने तथा समाज के लिए कुछ विशेष सेवामूलक गतिविधियों को संचालित करने का दुर्लभ अवसर प्राप्त हुआ है,

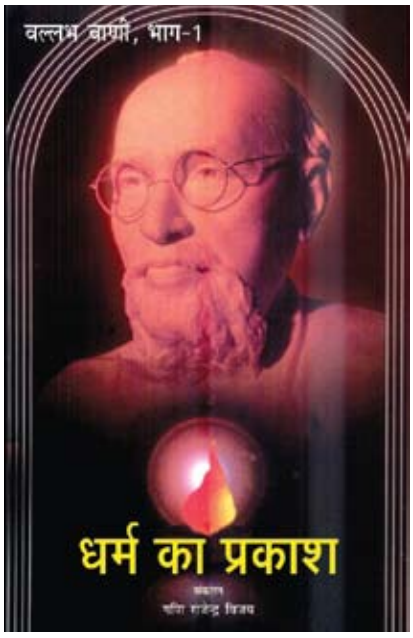

इस अवसर को स्वर्णिम बनाना है।

हमारे सामने एकलव्य आवासीय विद्यालय, सुखी परिवार (जीवदया) गौशाला, ब्राह्मी सुन्दरी कन्या छात्रावास जैसी जनोपयोगी योजनाओं के साथ-साथ एक ओर बड़ी योजना है गुरु वल्लभ की वाणी को जन-जन तक पहुंचाना। गुरु वल्लभ सूरीजी बीसवीं सदी की संत परम्परा के एक स्तंभ हैं, महान मनोवैज्ञानिक हैं, दार्शनिक हैं और धर्मनेता हैं। उनके प्रवचनों में धर्म और अध्यात्म की चर्चा होना बहुत स्वाभाविक है। पर उन्होंने जिस पैनेपन के साथ धर्म को वर्तमान युग के समक्ष रखा है, वह सचमुच मननीय है। जीवन की अनेक समस्याओं को उन्होंने धर्म के साथ जोड़कर उसे समाहित करने का प्रयत्न किया है। ईश्वर, जीव, जगत् पुनर्जन्म आदि आध्यात्मिक चिंतन बिंदुओं पर उन्होंने व्यावहारिक प्रस्तुति देकर उसे जनभोग्य बनाने का प्रयत्न किया है। उन्होंने जैन समाज की संस्कारों और संस्कृति की नींव हिलती देखकर अपने प्रवचनों एवं विचारों में खास तौर से जैन संस्कृति और दर्शन को जीवंतता देने के लिए विशेष प्रकाश डाला और समाज को एक नया मोड़ दिया। उन्होंने जैन धर्म को सर्वजन उपयोगी जीवन धर्म का रूप दिया। यत्र-तत्र देव, गुरु, धर्म और संस्कृति के महत्व और वस्तु तत्वों को सुस्पष्ट करने के साथ-साथ इनके प्रति श्रद्धा भी परिपुष्ट की। मेरा व्यक्तिगत जीवन भी उनके प्रवचनों से प्रभावित रहा है। मैंने उनके विचारों से जीवन ऊर्जा पायी है।कहा जा सकता है कि उनका प्रवचन साहित्य धर्म के व्यापक एवं असाम्प्रदायिक स्वरूप को प्रकट करने में सफल रहा है। गुरु वल्लभ की वाणी एक द्रष्टा की वाणी है। उनकी तप:पूत साधना से नि:सृत वाणी अनेक धाराओं तथा अनेक विषयों में प्रवाहित हुई है। आपकी आध्यात्मिक चेतना ने धर्म से जुड़ी रूढ़ धारणाओं से जनमानस को मुक्ति दी। यही वजह है कि धर्म, जाति, पंथ की आग्रही पकड़ को छोड़ सर्वधर्म समन्वय की दिशा में आप सबके पथ दर्शक बन गए । इसी संप्रदायातीत सोच ने धर्म का जीवंत रूप विश्व के सामने प्रकट किया है। सुखी परिवार अभियान इसी असाम्प्रदायिक सोच को जीवंतता देने का उपक्रम है।

यह खुशी की बात है आचार्य वल्लभ गुरु के जीवनोपयोगी विचारों को नये रूप में प्रस्तुत करने के लिए गणि राजेन्द्र विजय ने एक बीड़ा उठाया है और उनके विस्तृत विचारों और साहित्य से विविध विषयों को चुन-चुन कर एक ग्रंथमाला ''वल्लभ वाणी'' के रूप में तैयार की है। प्रस्तुत सम्पूर्ण ग्रंथमाला मेरी दृष्टि में भारतीय संत-साहित्य का एक अमूल्य दस्तावेज बन कर प्रस्तुत हो रही है और इसे प्रस्तुत करने का सौभाग्य सुखी परिवार फाउण्डेशन को प्राप्त हुआ, यह विशेष बात है। ●

L.M.G. ENGINEERING COMPANY

Manufacturers and Exporters of:
LIVE BRAND [ISI] MARKED HOT GALVANISED MALLEABLE PIPE FITTINGS & SCAFFOLDINGS
B-23 INDUSTRIAL FOCAL POINT, JALANDHAR (PUNJAB) – 144004

LIVE **IDOL** **IDEAL** **LIFE**

SUPREME METAL INDUSTRIES
THE MAHAVIR VALVES INDUSTRIES

NIRMAL KUMAR JAIN	+91–9888005336
SANJIV JAIN	+91–9815199268
PRASHANT JAIN	+91–9815101168

RESIDANCE: 267, ADARSH NAGAR, JALANDHAR

Manufacturers and Exporters of:
LIFE & IDEAL BRAND [ISI] MARKED GUNMETAL AND BRASS VALVES AND COCKS
C-71 INDUSTRIAL FOCAL POINT, JALANDHAR (PUNJAB) – 144004

Delhi Postal Regd No. DL(E)-20/5333/2010-2012
Date of Posting: 5 - 6 Every month

RNI No. DELBIL/2010/32807
October 2012

SHREE AADINATH TRADING COMPANY

BLACK DIAMOND MOVERS

COAL CONSULTANTS, COAL CO ORDINATORS, COAL MERCHANTS ,COAL HANDLING AGENTS

HIGHLIGHTS

- Leading Coal Handling Agents and Coordinators since 45 years.
- Complete Coal Solutions under one Roof.
- Handling bulk Coal requirements of Power Plants, Iron and Steel Plants and Paper Mills from the various subsidiaries of Coal India Ltd.
- Expertise in Coal Linkage from Ministry of Coal and Coal India Ltd.
- Expertise in Rake Loading/Unloading and Liasioning.

JAIN GROUP

Branches: Assam, Madhya Pradesh
Maharashtra, Uttar Pradesh
Uttarakhand, West Bengal
Jharkhand

CONTACT DETAILS
Black Diamond Movers
Flat 3A, Block 11,
Space Town Housing Society,
V.I.P. Road, Raghunathpur,
Kolkata- 700052
Contact Person:
Amit Jain- +91 9412702749
Ankit Jain- +91 9830773397
blackdiamondmovers@gmail.com

If undelivered please return to:
Editor, Samridha Sukhi Pariwar, E-253, Saraswati Kunj Appartment, 25 I. P. Extension, Patparganj, Delhi-110092